फरवरी-२००० Rs.10/-
चन्दामामा

चन्दामामा

सम्पुट-१०२ फरवरी २००० सञ्चिका-१

अन्तरङ्गम्

इस माह की विशेष

तीन यक्षिणियाँ - तीन वरदान
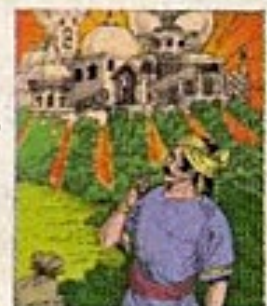
प्रतिभा को आश्रय
(बेताल कथा)

सपना या सच

अभिव्यक्त करो! पुरस्कार लो!

चन्दामामा

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K Press Pvt. Ltd., Chennai–600 026 on behalf of Chandamama India Limited, Chandamama Buildings, Vadapalani, Chennai–600 026. Editor: Viswam

संपादक
विश्वम
डिजाइनिंग व तकनीकी
सलाहकार
उत्तम

प्रधान कार्यालय
**चंदामामा बिल्डिंग्स
बडपलनि, चेन्नै-600 026
फोन-481778**

अन्य कार्यालय
दिल्ली
फ्लैट नं. 415, 4थी मंजिल
प्रताप भवन,
एस. बहादुरशाह जफर मार्ग
नई दिल्ली-110 002
फोन : 3353406/7
मुंबई
2/बी. नाज बिल्डिंग्स
लेमिंगटन रोड, मुंबई-400 004
फोन : 3889763-3886324-3877110
फाक्स : 3889670

**अमेरिका के लिए
एक प्रति
२ यु.एस.डालर
वार्षिक चंदा
२० यु.एस.डालर**

संस्थापक

<u>चक्रपाणि, बी. नागि रेड्डी</u>

आतंकवाद के विरुध्द संघर्ष

इंडियन एयर लाइन्स के वायुयान की त्रासदी, जिसका अपहरण शान्ति और खुशी के पर्व क्रिसमस की पूर्व सन्ध्या पर काठमांडू से नई दिल्ली के लिए रवाना होने के बाद कर लिया गया था, केवल उसके मृत अथवा हताहत यात्रियों से सम्बन्धित अथवा केवल भारत के लिए ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानवता की त्रासदी है। यह हम सभी मनुष्यों के लिए शर्म की बात है कि ऐसे पाशविक कर्मों के अपराधी हमारी ही जाति के सदस्य हैं।

किन्तु, क्या वे सचमुच मनुष्य हैं? पुराण शास्त्र कहता है कि जिस प्रकार देवगण मानव रूप ग्रहण कर सकते हैं, उसी प्रकार राक्षस कहता है कि जिस प्रकार देवगण मानव रूप ग्रहण कर सकते हैं, उसी प्रकार राक्षस, पिशाच तथा अन्य दुष्ट सत्ताएं और भूत-प्रेत भी कर सकते हैं। ऐसा लगता है मानों ये आतंकवादी मानव मुखौटे में ऐसी ही सत्ताएं हैं।

धर्म, राजनीति, आदर्शवाद ये सब के सब ऐसे लोगों के लिए सुविधाजनक बन जाते हैं जो एक व्यापक शब्दावलि 'आतंकवादी' के अन्तर्गत छिप जाते हैं। वे मूलतःविकृत मानसिकता के शिकार हैं जिन्हें अपने द्वारा पीड़ित व्यक्तियों के रक्त को देख और संहार कर नशा आ जाता है।

असहाय व्यक्ति को मारनेवाला कापुरुष होता है जो साहस, दृढ़-विश्वास और यहाँ तक कि न्याय-संगत शक्ति प्रयोग के साथ अपने विरोधी से सामना करने में इस प्रदेश को 'नरक' के नाम से पुकारती है।

समय आ गया है, जब सभी सभ्य देशों को दृढ़ निश्चय के साथ नरक के इन जानवरों का सामना करना चाहिए और उनके खतरे को सदा के लिए खत्म कर देना चाहिए।
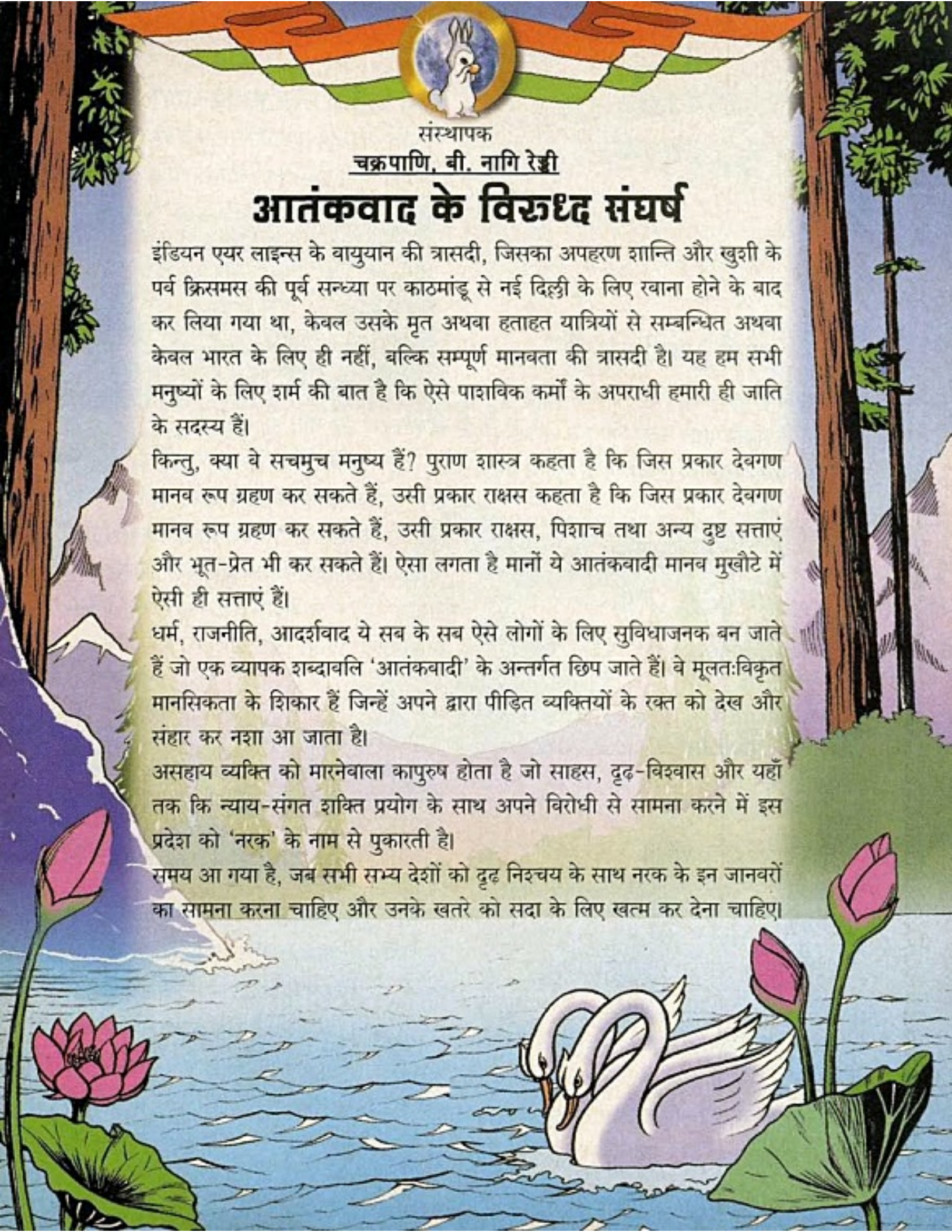
समाचार-झलक

खासी पुरानी मछली

भारतीयों का विश्वास है कि आदिम काल में भगवान ने सबसे पहले मत्स्य के रूप में अवतार लिया। क्रम विकास का सिद्धान्त भी कहता है कि

बनस्पति के पश्चात जीवन का आरम्भ जल में हुआ।

किन्तु, पहली मछली कब प्रकट हुई? चीन में चेंगजियांग के निकट दो मछलियों के जीवाश्म पर हाल में हुई खोज से पता चला है कि वे ५३०० लाख वर्ष पुराने हैं। दोनों मछलियों में एक दूसरे से भिन्नता होने के कारण वैज्ञानिकों की धारणा है कि उनके सजातीय पूर्वज कई लाख वर्ष और पहले रहे होंगे।

इससे मछली की आयु परम्परागत मान्यता से कम से कम ५०० लाख वर्ष पीछे चली जाती है।

नाच रही है मौत हमारे चारों ओर

विश्व स्वास्थ्य संघटन द्वारा किये गये सर्वेक्षण के अनुसार वायु प्रदूषण से औसतन प्रति वर्ष एक

लाख लोगों की मौत हो जाती है।

आप अपने मित्रों से इसके बारे में बताइए। हमें, इस जानलेवा को रोकने में, जहाँ भी और जब भी सम्भव हो, अपना सहयोग अवश्य देना चाहिए। कुछ देशों में जहाँ साइकिल से काम चल सकता है, वहाँ मोटर साइकिल का प्रयोग निरुत्साहित किया जाता है।

महातूफ़ान का कारण क्या था?

कैम्ब्रिज कोस्टल रिसर्च यूनिट के अनुसार महातूफ़ान, जिसने उड़ीसा के समुद्र तटीय क्षेत्रों में हजारों लोगों की जानें ले लीं, इतना विनाशकारी नहीं होता यदि सागर तट के कच्छ-बनस्पति बन नष्ट नहीं किये जाते। पिछले ४० बर्षों में भारत ने कच्छ-बनस्पति बनों का आधा भाग खो दिया है।

इस माह जिनकी जयन्ती है:

श्रीमाँ

आज जिन्हें हम श्रीमाँ के रूप में जानते हैं-जिन्होंने श्रीअरविन्द के कार्य को आगे बढ़ाया-उनका जन्म पेरिस में सन् १८७८ की २१ फरवरी को हुआ था। यह बहुत विलक्षण बात है कि उन्हें बचपन से ही अपने जीवन-लक्ष्य का स्पष्ट बोध था।

सन् १९१४ में वे श्रीअरविन्द से मिलने पांडिचेरी आईं। उन्हें तुरन्त अनुभव हुआ कि जिनसे उनकी भेंट हुई, वे एक उच्च चेतना के मूर्त्त रूप हैं-जो मानवता के भविष्य को देख सकते हैं। सन् १९२० में श्रीमाँ पांडिचेरी पुनः लौट आईं और फिर कभी वापस नहीं गईं। उनके अन्तिम आगमन के पश्चात् श्रीअरविन्द आश्रम का विकास उसी प्रकार हुआ जिस प्रकार अपनी माँ के इर्द-गिर्द रहनेवाले बच्चों का विकास होता है।

मानव के प्रति श्री अरविन्द की दृष्टि कुछ भिन्न है-कुछ नवीन। उनके अनुसार, अब तक मन द्वारा शासित मनुष्य, क्रमविकास के एक अगले ऊँचे चरण तक उठ सकता है। वह मन से परे जा सकता है। आज की मानसिक मानव जाति एक अतिमानसिक जाति, एक दिव्य मानव जाति बन सकती है।

श्रीअरविन्द और श्रीमाँ ने नयी मानवता के अवतरण के मार्ग की बाधाओं को दूर करने के लिए योग किया। यह कहना है कि उनकी योग-क्रिया के प्रभाव का क्षेत्र चेतना का प्रदेश था। एक दिन मानव जाति एक नई चेतना में विकसित हो जायेगी।

श्रीमाँ का एक लेखांश: ''प्रकृति में एक आरोहणशील विकास की प्रक्रिया है, जो पत्थर से वनस्पति, वनस्पति से पशु और पशु से मनुष्य तक जाती है। क्योंकि, मनुष्य अब तक, आरोहणशील विकास के शीर्ष पर अन्तिम चरण है, वह अपने को इस आरोहण की अन्तिम अवस्था मानता है और समझता है कि पृथ्वी पर उससे श्रेष्ठतर कुछ नहीं हो सकता। यही उसकी भूल है। वह अब भी अपनी भौतिक प्रकृति में लगभग पूरी तरह पशु है, सोचनेवाला और बोलनेवाला पशु-किन्तु, बाहरी आदतों और वृतियों में अभी तक पशु ही है। निस्सन्देह प्रकृति इस अपूर्ण परिणाम से सन्तुष्ट नहीं हो सकती। वह एक ऐसी सत्ता को विकसित करने का प्रयास कर रही है जो मनुष्य के लिए वैसी ही होगी, जैसा आज मनुष्य स्वयं पशु के लिए है, एक ऐसी सत्ता जिसका बाहरी आकार मनुष्य का होगा, फिर भी, उसकी चेतना मानव मन और उसकी अज्ञान के प्रति दासता से बहुत ऊपर और ऊँची होगी।''

चन्दामामा

फरवरी २०००

उत्तर

1. रानी पद्मिनी एवं मेवाड़ (उदय पुर) के राणा रतन सिंह। आक्रामक था-अलादीन खिलजी। यह घटना १३०२ में हुई।

2. अ. प्रथम चचेरे भाई

   ब. कंस जरासंध के ससुर थे।

   स. सौतेले भाई।

   द. कृपाचार्य अश्वत्थामा के मामा थे।

   इ. सौतेले भाई।

3. १. विष्णु शर्मा कृत पंच तंत्र

   २. गुणाढ्य् द्वारा कृत बृहत् कथा जिससे सोमदेव कृत कथा सरित सागर लिया गया है।

   ३. बुद्ध की जातक कथाएँ

   ४. भागवत गीता

   ५. वेद, उपनिषद्, महाकाव्य (रामायण एवं महाभारत) तथा पुराण।

सर्जनात्मक स्पर्द्धाएँ

पाठकों को आमंत्रित करता है

चन्दामामा

निम्नलिखित क्षेत्रों में कल्पना की उड़ान और खोज भरे सर्जनात्मक प्रतियोगों में भाग लेने के लिए :

छाया चित्र

अनुशीर्षक प्रतियोगिता

१. **छायाचित्र अनुशीर्षक प्रतियोगिता पृष्ठ के लिए:** उदीयमान छविकार एक युगल-चित्र भेज सकते हैं, जिसमें दोनों चित्र एक दूसरे से किसी प्रकार सम्बन्धित हों। दोनों चित्रों में सम्बन्ध के बारे में छविकार का अपना स्पष्टीकरण साथ में अवश्य होना चाहिए।

चयनित युगलचित्रों के लिए

पारितोषिक : ५०० रु.

प्रतियोगिता के लिए छाया चित्र किसी समय भेजे जा सकते हैं।

२. चन्दामामा द्वारा घोषित मुहावरा या लोकोक्ति के अर्थ को स्पष्ट करते हुए पाठक १५०-१७५ शब्दों में एक उपाख्यान या चुटकुला, निजी अनुभव या कहानी (नई/पुरानी) भेज सकते हैं। कृपया याद रखें कि आप की रचना में कहानी का तत्व हो, किन्तु वह मूल कथा न हो जिससे यह लोकोक्ति या मुहावरा लिया गया है।

वर्तमान प्रतियोग के लिए

लोकोक्ति :

दूर का ढोल सुहावन

चयनित रचना पर पारितोषिक : ५०० रु.

सभी प्रस्तुतियाँ प्राप्त करने की

अन्तिम तिथि २८ फरवरी, २०००

पुरस्कृत रचना चन्दामामा के मई, २००० अंक में प्रकाशित होगी।

बेताल कथा

प्रतिभा को आश्रय

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः उस पेड़ के पास चला गया। और उसने यथावत् पेड़ पर से शव को उतार कर अपने कंधे पर डाल लिया। फिर निर्भीक होकर श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव के अन्दर छिपे बेताल ने कहा,-''राजन! आप का संकल्प और साहस अदम्य है, कठोर से कठोर परिश्रम करने की आप में अद्भुत शक्ति है और ऊँचे से ऊँचे लक्ष्य को साधने के लिए अपेक्षित धैर्य और सामर्थ्य है। संसार में आप जैसा व्यक्ति बिरला ही होगा। लेकिन आप जिस प्रकार अपनी शक्ति और सामर्थ्य का उपयोग कर रहे हैं, वह निरर्थक लग रहा है। आप जिस लक्ष्य की सिद्धि के लिए आधी रात के

समय इस निर्जन श्मशान में इतना घोर परिश्रम कर रहे हैं, क्या उसकी स्पष्ट जानकारी है? यदि नहीं, तो ये सारे प्रयास व्यर्थ हैं और आप भी विवेक शर्मा की भाँति सब कुछ पाकर भी अन्तिम क्षण में सब कुछ गवाँ देंगे। आप को सचेत करने के लिए उसकी कहानी सुनाता हूँ। इससे मार्ग की थकावट भी दूर हो जायेगी।''

इतना कह कर बेताल कहानी सुनाने लगाः

साहित्यपुर में विवेक शर्मा नाम का एक कवि रहता था। उसने बहुत से काव्य-ग्रंथों की रचना की। उसकी काव्य-कृतियों में एक महाकवि की सभी विशेषताएं विद्यमान थीं। फिर भी महाकवि के रूप में यश और ख्याति उपलब्ध करने की उसमें तनिक भी लालसा नहीं थी। वह तो इतना ही चाहता था कि उसके काव्य को अधिक से अधिक लोग पढ़ें और उससे प्रेरणा लेकर समाज और देश के लिए कुछ करें। लेकिन ऐसा नहीं हो सका। उसकी कृतियाँ आम जनता तक नहीं पहुँच पाईं।

''सामान्य जनों तक तुम्हारी रचनाएं पहुँचें, इसके लिए इनका प्रचार आवश्यक है। प्रचार के लिए आवश्यक है कि तुम किसी साहित्य-प्रेमी सेठ की शरण में जाओ। उसकी सहायता से एक विराट साहित्य-सम्मेलन का आयोजन करो जिसमें राष्ट्रीय स्तर पर तुम्हारा सम्मान किया जाये। तुम्हारे काव्य की श्रेष्ठता पर समीक्षक अपने विचार व्यक्त करें। समाचार पत्रों में तुम्हारे चित्र के साथ भेंट वार्ता प्रकाशित हो। तब जाकर सामान्य लोगों में तुम्हारी कृतियों के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होगी।'' विवेक शर्मा के एक शुभ चिन्तक मित्र ने उसे परामर्श दिया।

लेकिन विवेक शर्मा के विचार भिन्न थे। उन्होंने कहा,-''मेरे प्रचार के बिना ही मेरे काव्य की श्रेष्ठता लोगों को मालूम हो जाये, तब मुझे संतोष होगा। श्रेष्ठ काव्य की ख्याति सूर्य की किरणों की भाँति स्वयं फैलनी चाहिए। तुम्हारे बताये मार्ग पर चलना मेरे सिद्धान्त के विरुद्ध है।''

इसी बीच राजा प्रगल्भ वर्मा ने देश भर में यह घोषणा करवाई कि यद्यपि वे स्वयं महाकवि हैं फिर भी वे किसी अन्य प्रतिभाशाली कवि के साथ मिल कर एक महाकाव्य की रचना करना चाहते हैं। जिस कवि को इस सह-सृजन के लिए चुना जायेगा, उसका राष्ट्रीय स्तर पर सम्मान और प्रचार किया जायेगा।

विवेक शर्मा के मित्र ने इस घोषणा को सुनने के बाद उससे फिर कहा,-''यह तुम्हारे लिए स्वर्ण अवसर है। किसी भी कवि या कलाकार की पहचान के लिए राजा का आश्रय अनिवार्य है। तुम्हें इस अवसर को हाथ से नहीं जाने देना चाहिए और तुरन्त राजधानी जाने के लिए तैयार हो जाना चाहिए।''

अपने मित्र के प्रोत्साहन और प्रेरणा से विवेक शर्मा राजधानी जाकर राजा से मिला। राजा ने कुछ अपनी रचनाएं विवेक शर्मा को दीं और उससे कुछ उसकी कृतियाँ स्वयं पढ़ने के लिए लीं और कहा,-''मैं आप की रचनाओं का अध्ययन कर अपना विचार दूँगा और आप भी मेरी कविताओं की समीक्षा कर अपना मत मुझे बताइए। एक सप्ताह के बाद अपने-अपने विचारों का आदान- प्रदान करने के लिए हम लोग फिर मिलेंगे।''

राजा के अतिथि भवन में कवि विवेक शर्मा के ठहरने की व्यवस्था कर दी गई। उसी अतिथि भवन में कुछ अन्य कवि भी ठहरे हुए थे जो राजा के साथ काव्य सृजन करने की प्रत्याशा लेकर आये थे। विवेक शर्मा ने राजा की कृतियों को एक ही दिन में पढ़ लिया। अन्य दिनों में अन्य कवियों के साथ बात कर उनकी काव्य प्रतिभा को परखता रहा।

उन कवियों से बातचीत करने के बाद विवेक शर्मा ने उनसे कहा,-''आप सब की कविताओं के भाव और उनमें अन्तर्निहित ज्ञान अद्भुत है। परन्तु भाव के अनुकूल भाषा-शैली में परिपक्वता नहीं है और अभिव्यंजना में चमत्कार का अभाव है। काव्य की आत्मा के अनुकूल सुन्दर कलेवर न

हो तो कविता निखर नहीं पाती जैसे चिथड़ों में राजा का प्रभाव दिखाई नहीं पड़ता। इस योग्यता को पाना हो तो कुछ दिनों तक और गुरु की छत्रछाया में काव्य साधना करनी होगी।''

उन कवियों को विवेक शर्मा द्वारा की गई अपनी आलोचना से कोई आश्चर्य या दुख नहीं हुआ मानों उन्हें अपने विषय में पहले से जानकारी थी। पर वे विवेक शर्मा की काव्य सम्बन्धी सूक्ष्म दृष्टि से प्रभावित अवश्य हुए। उनमें से एक ने कवि शर्मा से कहा,-''आप द्वारा बर्णित महाकवि की सभी विशिष्टताएं हमारे गुरुदेव में विद्यमान हैं। परन्तु वे स्वयं यहाँ नहीं आये, हम लोगों को भेज दिया।''

''कितना अच्छा होता यदि आप के गुरुदेव स्वयं आते। हमारे राजा किसी प्रतिभावान महाकवि के साथ एक महाकाव्य का प्रणयन करना

चाहते हैं। इसमें आप के गुरुदेव जैसे महाकवि के सहयोग की अपेक्षा थी।'' विवेक शर्मा को इस बात पर आश्चर्य हुआ कि इन कवियों के गुरुदेवने राजा की घोषणा पर स्वयं न आकर अपने अधकचरे-अयोग्य शिष्यों को भेज दिया।

''यह तो उनकी घोषणा मात्र है। वास्तविकता कुछ और है। वास्तविक स्थिति को भाँप कर ही हमारे गुरुदेव नहीं आये। लगता है राजा के विषय में आप को पूरी जानकारी नहीं है।'' एक कवि ने कहा।

उन कवियों ने राजा के विषय में कुछ ऐसी अन्तरंग बातें बताईं जो विवेक शर्मा के लिए बिल्कुल नई थीं और जिन्हें सुन कर राजा के प्रति उसकी आदर-भावना को आघात लगा। उन कवियों ने बताया कि प्रगल्भ वर्मा स्वयं बहुत उच्च कोटि का कवि नहीं है, लेकिन उसमें महाकवि के रूप में ख्याति की लालसा बहुत है।

वह छात्र जीवन में परिश्रमी बहुत था, लेकिन जन्मजात प्रतिभा का अभाव था। कठोर परिश्रम द्वारा उन्होंने उस समय कुछ विधाओं में थोड़ी-बहुत दक्षता प्राप्त कर ली थी। युवराज होने के कारण उसे थोड़ी-सी सफलता पर ही बहुत प्रशंसा और प्रोत्साहन मिलता, जिससे वह अपने को काव्य की हर विधा में असाधारण रूप से निष्णात मानने लगा। जब वह साहित्य गोष्ठियों में अन्य महान कवियों से मिला तब उसे अपनी वास्तविक सीमित ज्ञान का आभास हुआ और वह यह समझ गया कि महाकवि की योग्यता से वह कोसों दूर है। तब से वह महान कलाकारों, महाकवियों और प्रतिभावान व्यक्तियों के समक्ष हीन भावना का शिकार रहने लगा और इस कारण बहुत चिंतित और उदास रहने लगा।

जब वह राजा बन गया तब उसके महा मंत्री ने इस चिंता से मुक्त होने के लिए यह परामर्श दिया ''अभी राज्य में शांति है और कोई समस्या नहीं रहने के कारण योग्य व्यक्तियों की आवश्यकता नहीं है, इसलिए विशिष्ट प्रतिभावानों को अपने अधीन कोई पद न दें और कम बुद्धि वालों को ही अपने पास रखें। इस से आप का आत्म विश्वास बना रहेगा और हीन भावना पास फटक नहीं पायेगी। हाँ, प्रतिभावान व्यक्तियों के लिए एक अलग शरणालय की स्थापना कीजिए। उन्हें अच्छा वेतन, हर प्रकार की सुख-सुविधा और आराम दीजिए और विशेष परिस्थितियों में

उनसे केवल परामर्श और मंत्रणा लेते रहिए। उनकी प्रतिभा का लाभ मिलता रहेगा और राज-काज सम्बन्धी उनके पास अधिकार न होने के कारण आप के दैनिक कार्यों में उनका कोई हस्तक्षेप न होगा।''

राजा ने महा मंत्री के परामर्श पर एक प्रतिभा आश्रय की स्थापना की, जिसमें कितने ही योग्य कवियों और कलाकारों को आश्रय दिया गया। वे वहाँ आनन्द से, बिना किसी परिश्रम और परेशानी के, निश्चिंत जीवन बिताने लगे। यद्यपि आश्रय में प्रतिभाओं की कमी न थी, फिर भी प्रजा यह समझती थी कि उन्हें उन प्रतिभाओं का लाभ नहीं मिल रहा है। इसलिए प्रजा के मन में उनके लिए आदर-भाव नहीं था। लेकिन प्रतिभाओं के लिए आश्रय की स्थापना करने के कारण वे राजा की प्रशंसा करते थे।

राजा ने एक मंदबुद्धि को अपना नया मंत्री बनाया और एक सामान्य अयोग्य सेनाधिकारी को अपना सेनापति जो युद्ध कौशल में उससे कम ज्ञान और अनुभव रखता था।

यह सब जानने के बाद विवेक शर्मा आश्रय जाकर वहाँ की प्रतिभाओं से मिला और उनके गहरे ज्ञान और पांडित्य से बहुत प्रभावित हुआ। उन विद्वानों के हाथ में अपनी काव्य कृतियाँ देख कर उसे आश्चर्य हुआ। पूछने पर विद्वानों ने उन कृतियों की प्रशंसा करते हुए कहा कि राजा ने इन कविताओं की समीक्षा कर हमलोगों का मत जान ना चाहा है। हम सभी के दृष्टिकोण में ये कृतियाँ सर्वश्रेष्ठ काव्य के नमूने हैं। उन विद्वानों को इन काव्यों के रचयिता महाकवि को सामने देख कर और भी प्रसन्नता हुई।

विवेक शर्मा ने उन विद्वानों की प्रतिभा की प्रशंसा करते हुए उनसे पूछा कि आप लोग इतने योग्य होते हुए भी एक अज्ञात जीवन क्यों जी रहे हैं जो शरणालय की चारदीवारी में बन्द है, जिसके बारे में देश की प्रज़ा को कोई ज्ञान नहीं है और न आप की प्रतिभा का उन्हें लाभ मिल रहा है।

इसके उत्तर में उन महाकवियों और पंडितों ने

पहला कारण यह बताया कि यहाँ केवल पंडितों, विद्वानों, साहित्यकारों और कलाकारों को ही स्थान मिलने के कारण उनकी संगति में रहने का अवसर मिलता है।

दूसरा कारण यह बताया कि हम अपनी सच्ची पहचान या ख्याति के प्रति अधिक चिंतित नहीं हैं। हम इसी में सन्तुष्ट और तृप्त हैं कि हमारे परामर्श और मंत्रणा से राजा और प्रजा दोनों को लाभ पहुँच रहा है।

इसके अतिरिक्त यहाँ हर प्रकार का आराम और सुख है।

विवेक शर्मा राजा के विषय में यह सब जान कर भी उसके पास निर्धारित समय पर गया और उसकी कृतियों के विषय में अपना मत देते हुए कहा, -"आप के काव्य भाषा प्रांजल है, व्यंजनात्मक है; किन्तु भाव में न तो गहराई है और न नवीनता। इसलिए इसे उच्च कोटि का काव्य नहीं कहा जा सकता।

विवेक शर्मा के स्पष्ट उत्तर से राजा को कष्ट नहीं हुआ। राजा ने इसकी रचनाओं की प्रशंसा करते हुए कहा कि यह एक प्रतिभावन कवि की निःसंन्देह सर्वोत्तम कोटि की रचना है। ऐसी प्रतिभाओं के लिए हमारे शरणालय में सर्वदा स्वागत है। साथ ही, उसने विवेक शर्मा को रत्नों का एक हार भेंट किया।

लेकिन विवेक शर्मा ने राजा का यह प्रस्ताव ठुकरा कर शरणालय में रहने से इनकार कर दिया क्योंकि तब तक उसे यह ज्ञात हो चुका था कि राजा ने उन चार अयोग्य कवियों के साथ काव्य रचना का निर्णय पहले ही ले लिया है। शरणालय में सिर्फ आराम से सुख-सुविधाओं के बीच में रहना मात्र उसे अच्छा नहीं लगा। इसलिए राजा से विदा लेकर वह अपने गाँव साहित्यपुर लौट आया।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा, -"राजन! विवेक शर्मा ने जान-बूझ कर हाथ में आये सुअवसर को खो दिया। शरणालय में रहता तो प्रतिभावानों के बीच में रहने का मौका मिलता। क्या यह उसका अविवेक नहीं। यदि इसका उत्तर जान कर भी नहीं बताओगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।"

राजा विक्रमार्क ने कहा, -"विवेक शर्मा न सिर्फ एक असाधारण प्रतिभा का कवि था, बल्कि उसके विचार भी उदात्त और महान थे. वह ऊँचे सिद्धान्त का व्यक्ति था। न उसे सस्ती लोकप्रियता की

जैसे सुगन्धित फूलों से लदा एक वृक्ष अपनी सुखद सुरभि से जंगल को भर देता है, वैसे ही एक सुयोग्य पुत्र भी सम्पूर्ण परिवार को महिमान्वित कर सकता है।

-चाणक्य

लालसा थी, और न महाकवि के रूप में यश का भूखा। वह यह भी नहीं चाहता था कि धन या सत्ता के आक्षय में उसकी प्रतिभा पले और भय से वह सत्य को नकारे और सुख-सुविधा के लोभ में असत्य और झूठी प्रशंसा को प्रश्रय दे। शरणालय में रहनेवाले यद्यपि मेधावी और प्रतिभावान थे, लेकिन उनके जीवन का कोई ऊँचा उद्देश्य नहीं था। वे अपनी प्रतिभा से कोई महान प्रयोजन सिद्ध करना नहीं चाहते थे। राजप्रश्रय में रह कर सुख-सुविधा भोगना ही उनका लक्ष्य था। ऐसे लोग भय से राजा के प्रति अपने सत्य और निर्भीक विचार कभी व्यक्त नहीं सकते। जबकि विवेक शर्मा ने निःसंकोच राजा के सम्मुख उसके काव्य की कटु आलोचना की और सत्य की अभिव्यक्ति के लिए परिणाम की तनिक भी परवाह नहीं की।

अतिथि में रहने वाले कवियों से उसे राजा के विषय में जब यह मालूम हुआ कि वह अपने से श्रेष्ठ और सिर्फ अपनी झूठी प्रशंसा करवाने के लिए ही शरणालय में उन्हें आश्रय देता है, तो वह समझ गया कि उसकी प्रतिभा का सच्चा प्रयोजन यहाँ सिद्ध नहीं होगा।

वह चाहता था कि कवि के रूप में उसकी पहचान लोक-जीवन में उसकी प्रतिभा, ज्ञान और काव्यगत गुणों के आधार पर हो और वह जन-जन का कवि बन जाये, लोग उसके काव्य को अपने जीवन की शैली बना लें, अपने दैनिक आचरण में उतार लें तो उसके कवित्व को एक प्रयोजन मिल जायेगा और उसकी प्रतिभा का औचित्य सिद्ध हो जायेगा।

यह सब राजदरबार का चाटुकार कवि बन कर वह कभी न कर सकता था। इसलिए राजा के आश्रय को ठुकरा कर विवेक शर्मा ने अपनी दृष्टि में एक बहुत बड़े विवेक का परिचय दिया, न कि विवेक हीनता का।''

राजा का मौन भंग होते ही बेताल शवसहित अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।
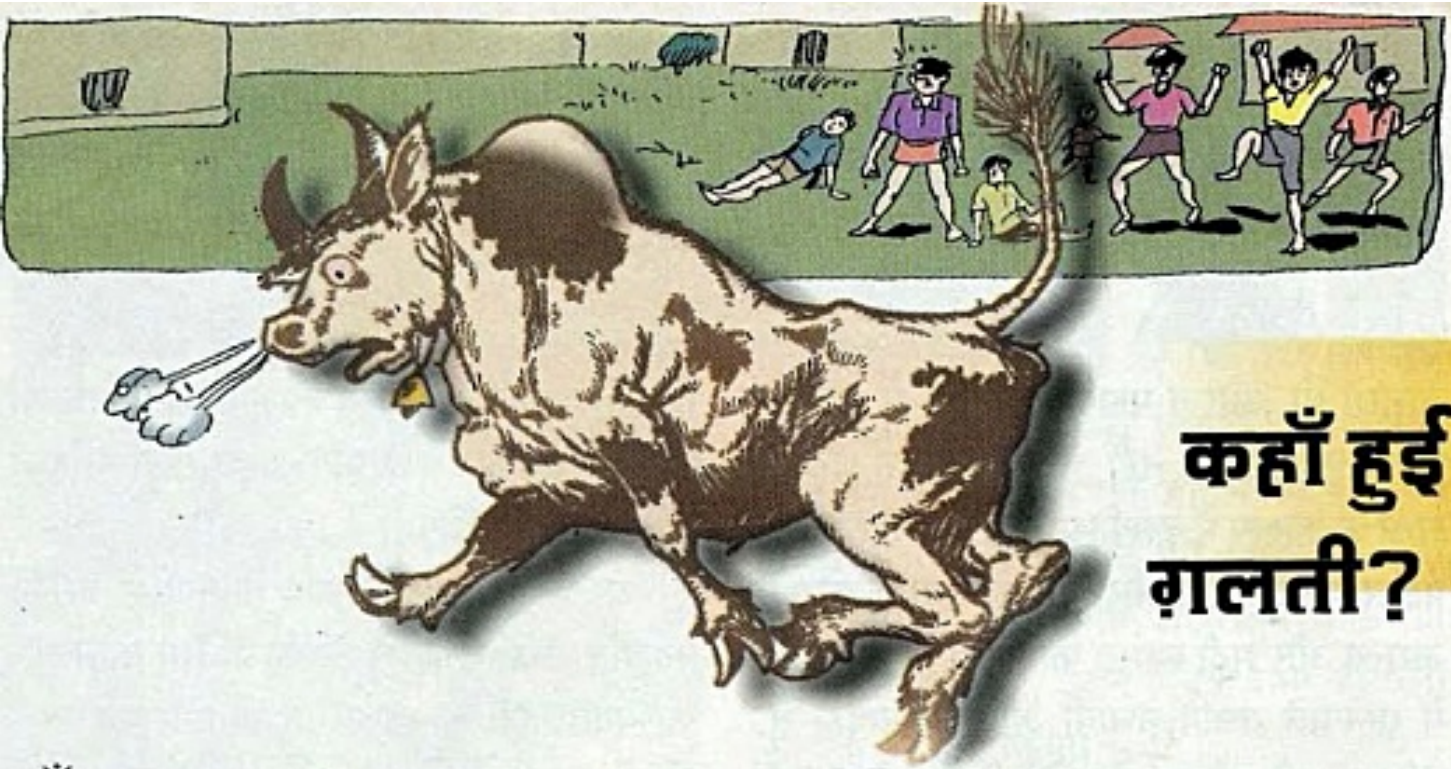
कहाँ हुई ग़लती?

गाँव के शिवालय के शंकर भगवान के प्रति समर्पित वृषभ बड़ा गर्वीला प्राणी था. जो भी वहाँ से गुजरता, उस पर आक्रमण करना उसे बहुत अच्छा लगता था; यद्यपि उसने वास्तव में कभी किसी को हानि नहीं पहुँचाई। उससे भयभीत होकर, जो तेज गति से भाग नहीं सकते थे, उनमें से कुछ तो धूल में, और कुछ सड़क किनारे झाड़ियों में लुढ़क जाते थे।

गाँव के जमीन्दार का बेटा शिवशंकर गाँव से कई मील दूर अपने मामा के घर रहता था, क्योंकि वहाँ एक अच्छा प्राथमिक विद्यालय था। वह अपने गाँव आया हुआ था और शिवालय के निकट नदी किनारे गाँव के हम-उम्र बचों के साथ खेल रहा था।

वृषभ के निकट से गुजरते हुए बिना किसी गलती के उसके आक्रमण से अपमानित होने पर उसे खीज आ रही थी। सौभाग्यवश उसके साथियों ने उसकी दुर्दशा नहीं देखी। साथियों ने उसे सावधान किया,-"वह वृषभ बहुत घमण्डी है। हम लोग तो उसकी शरारत के आदी हो चुके हैं, बुरा नहीं मानते। इसके अतिरिक्त, शंकर भगवान की सवारी होने के कारण कोई उसे मार-पीट भी नहीं सकता।"

एक भिखारी वृषभ के पास से गुजर रहा था। उसके शरीर पर वस्त्र के नाम पर कुछ चिथड़े मात्र थे और हाथ में भीख मांगने के लिए वह एक पुराना थैला लटकाये था। बच्चों ने सोचा कि वृषभ उसे देख कर जरूर उत्तेजित होगा और टूट पड़ेगा। बेचारा भिखारी भाग नहीं सकेगा।

बचे सांस रोक कर प्रतीक्षा करने लगे। जमीन्दार का बेटा यह दिखाने के लिए कि वह दूसरों से अलग है और उन सबमें बहादुर है, और तमाशे का निकट से आनन्द लेने के लिए वृषभ के बहुत करीब चला गया। निस्सन्देह उसने इस बात का ध्यान रखा कि वह घमण्डी वृषभ के पीछे ही रहे, ताकि वह उसे देख न सके।

भिखारी सांड़ की आदत से परिचित था। उसने अपनी चाल धीमी कर दी और "शिवशंकर,

परोपदेश में धाराप्रवाहिता उपलब्ध करना रहेक के लिए सरल है। किन्तु, धर्मपरायणता को अपने वास्तविक आचरण में लाने वाले महात्मा बिरले होते हैं।

— हितोपदेश

शिवशंकर'' बुदबुदाता हुआ उसके पार्श्व से निकलने लगा। शिवालय के देवता का भक्तिपूर्वक लिया गया नाम वृषभ को हमेशा अच्छा लगता। भिखारी निर्विघ्न वहाँ से गुजर गया।

वृषभ के अधिक निकट होने के कारण सिर्फ़ जमीन्दार का बेटा भिखारी की बुदबुदाहट सुन सका था। वह दो कारणों से बहुत प्रसन्न हुआ। पहला, उसने वृषभ को शांत करने का रहस्य जान लिया था। दूसरा, शिवशंकर उसी का नाम था।

''भिखारी सचमुच बहादुर है।'' बच्चों ने कहा।

शिवशंकर अपने दोस्तों के पास आया और तालियाँ बजाता हुआ बोला,-''मैं भी वृषभ के पास से जा सकता हूँ और वह मुझे कुछ नहीं करेगा।''

''नहीं, नहीं, ऐसा कभी मत करना।'' दोस्तों ने उसे सावधान किया।

लेकिन शिवशंकर को पक्का विश्वास था कि वह वृषभ को नियंत्रित रखने का रहस्य जान गया है। इसीलिए उसके निकट से जाते हुए वह बुदबुदाने लगा,-''मैं स्वयं, मैं स्वयं, मैं स्वयम्।'' आखिर शिवशंकर वही तो था।

वृषभ पहले की अपेक्षा कुछ ज्यादा ही जोश के साथ उस पर टूट पड़ा। शिवशंकर जान बचा कर भागा और एक शिलाखण्ड से टकराता हुआ झाड़ियों में लुढ़क गया।

भिखारी ज्यादा दूर नहीं गया था। उसने दौड़ कर बच्चे को झाड़ियों में से निकाला। शिवशंकर के दोस्त भी भाग कर आये।

शिवशंकर की आँखों से आँसू बहने लगे। और, वह इस बात के लिए बहुत हैरान भी हुआ कि आखिर उससे कहाँ हुई ग़लती।

जिगरी दोस्त

गोकुल और गोपाल दोनों एक ही गाँव के रहनेवाले थे। दोनों अपने-अपने काम से एक दिन पड़ोस के गाँव में गये हुए थे। अपने गाँव लौटते समय वे दोनों साथ आ रहे थे।

गोपाल को अपने बारे में डींग हाँकने की आदत थी। बात बना कर अपने अपमान को अपनी प्रशंसा में बदल देना उसके लिए बायें हाथ का खेल था।

जैसे ही वह अपने गाँव पहुँचा, उसने सामने की गली से किसी को घोड़ा गाड़ी से आते देखा। उसे देखते ही उसने गोकुल से कहा, -''आज तो मैं बुरी तरह उलझ जाऊँगा। सामने से घोड़ा गाड़ी से आने वाला गाँव का सबसे धनी कृष्ण यादव मेरा जिगरी दोस्त है। बचपन में एक साथ पढ़ते और तरह-तरह के खेल खेला करते थे। यदि वह मुझे देख ले तो जबरदस्ती पकड़ कर मुझे अपने घर ले जायेगा, तरह-तरह के पकवान खिलायेगा और बचपन की बातें घंटों सुनाता रहेगा। और यह सब मुझे न चाहते हुए भी सुनना पड़ेगा। मेरे पास इतना समय कहाँ है? मुझे अभी घर जाकर कितने ही सारे काम करने हैं। मैं नहीं चाहता कि वह मुझे देखे और मेरा समय नष्ट करे। इसलिए मैं दीवार के पीछे छिप जाता हूँ।'' इतना कह कर वह एक घर की दीवार के पीछे छिप गया।

इतने में घोड़ा-गाड़ी निकट आ गई। गाड़ी से श्वेत रेशमी वस्त्र तथा कीमती चप्पल धारण किये और हाथ में छड़ी लिए एक सम्भ्रान्त व्यक्ति उतरा। उसने क्रोध में अपने नौकर से कहा, - ''पकड़ो उस बदमाश को जो दीवार के पीछे छिप गया है और उसकी पिटाई करो।''

नौकर दीवार के पीछे छिपे गोपाल को पकड़ने ही वाला था कि वह वहाँ से बेतहाशा भागा और दूसरी गली के कोने में खड़ा होकर गोकुल के आने का इंतजार करने लगा। गोकुल यह सब तमाशा देख कर हैरान था। गोपाल के पास पहुँच कर गोकुल ने उससे कहा, - ''कृष्ण यादव तो क्रोध में अपने नौकर से तुम्हें पीटने के लिए कह रहा था। परन्तु तुम तो कह रहे थे कि....''

बीच में उसकी बात को काटते हुए गोपाल ने कहा, ...''कि वह मेरा जिगरी दोस्त है। यही न? बचपन में भी हम लोग इस प्रकार का खेल खेला करते थे। देखने वालों को मेरे दोस्त का व्यवहार कटु और भद्दा लगता है, लेकिन मैं उसके स्वभाव को जानता हूँ, इसलिए बुरा नहीं मानता।''
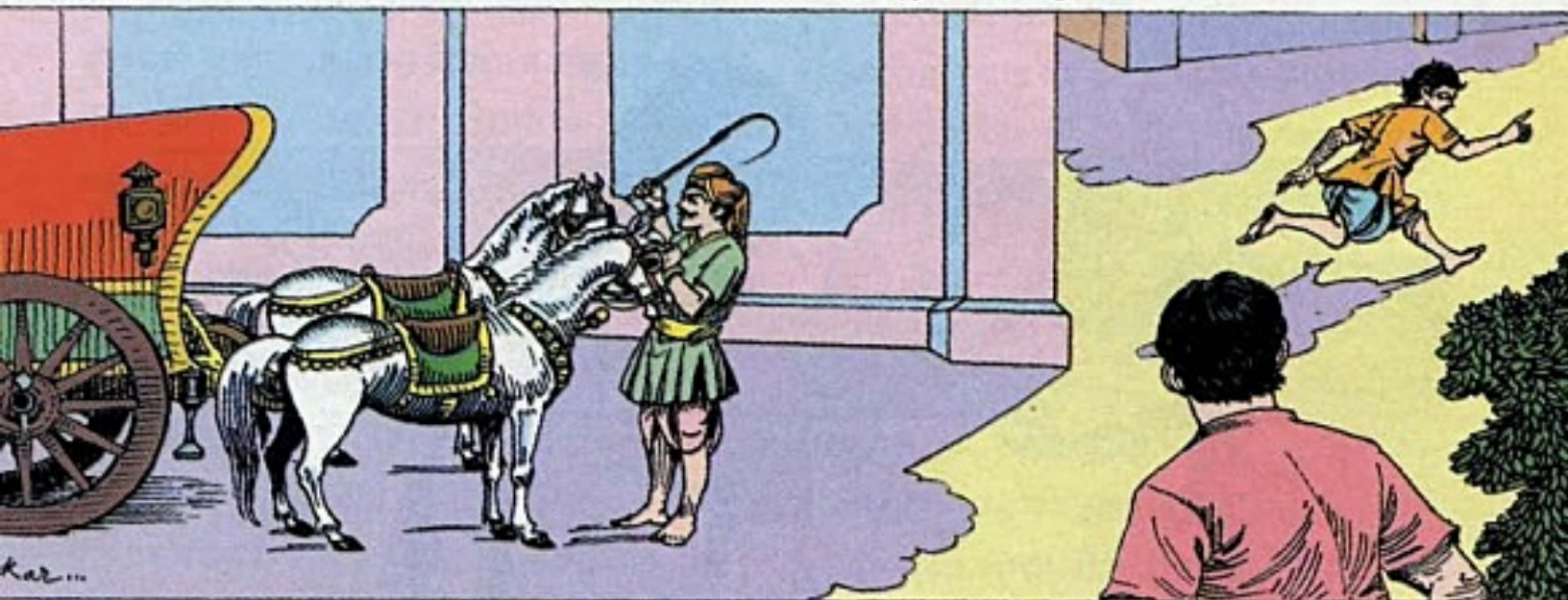
*[**अब तक:** बहुत पहले दक्षिण भारत चार राज्यों में बँटाथा-कौंडिन्य, कालिन्दी, चम्पक और कुन्द। कौंडिन्य के राजा पौरस्वत ने अपनी बुद्धि और बाहुबल से सभी राज्यों को मिला कर एक बड़े साम्राज्य की स्थापना की। लेकिन उसकी मृत्यु के पश्चात सभी राजा पुनः स्वाधीन हो गये। कई पीढ़ियाँ गुजर गईं।*

*कौंडिन्य के वर्तमान राजा श्रीदत्त और कालिन्दी के राजा माधवसेन के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे। यह लगभग निश्चित था कि कौंडिन्य के युवराज विजयदत्त का विवाह कालिन्दी की राजकुमारी श्रीलेखा से होगा। चम्पक के राजा मरालभूपति की कुदृष्टि कौंडिन्य की सम्पत्ति पर थी और उसके बेटे चक्रभूपति की नज़र श्रीलेखा पर। मरालभूपति ने अपनी कूटनीति से माधव सेन को अपने पक्ष में मिला कर कौंडिन्य पर आक्रमण करने की योजना बनाई और श्रीलेखा का अपने राजकुमार के साथ विवाह के लिए भी उसे राजी कर लिया। किन्तु, माधवसेन की रानी बसुमती चाहती थी कि श्रीलेखा का विवाह विजयदत्त के साथ ही हो, इसलिए उसे गुप्त रूप से कौंडिन्य भेज दिया। दोनों ने गंधर्व रीति से विवाह कर लिया।...**आगे**]*

यहाँ विजयदत्त श्रीलेखा से गंधर्व विवाह कर रहा था और उधर कालिंदि देश में श्रीलेखा का पिता दिशाहीन हो नित्सहाय स्थिति में बैठा था।

दूसरे एक भवन में चंपक प्रभु मरालभूपति अपने पुत्र के साथ भूखे सिंहों की तरह मौके की ताक में थे।

वह ज्येष्ठ एकादशी का दिन था। श्रीलेखा व चक्रभूपति की मंगनी की निश्चित तिथि थी। इसके दो दिन पूर्व ही सेना सहित मराल, चक्रभूपति दोनों कालिंदि आये थे। पूर्व निश्चित योजना के अनुसार मंगनी का कार्यक्रम पूरा होने के बाद वे बहुल दशमी तक कालिंदि मे समय-यापन करेंगे और उसी दिन रात को कौडिन्य पर आक्रमण करेंगे। यह योजना मराल व माधवसेन ने आपस में तय की थी। जब माधवसेन रथोत्सव में भाग लेने गया था, तभी यह योजना सुनिश्चित हुई थी।

लक्ष्मी गायत्री

उस दिन मरालभूपति ने माधवसेन से कहा ''मित्र, मेरी बात का बुरा न मानना। इन विषयों को अंत:पुर की स्त्रीयों से गुप्त रखो। महारानी ही क्यों न हो, आखिर वह स्त्री जो ठहरी। ऐसी बातें हमारे लिए खतरनाक साबित हो सकती हैं।''

माधवसेन मराल की सुमधुर बातों में फंस चुका था। उसे उसकी सारी बातें सही लगीं। पुत्री को बिना बताये उसके विवाह को निश्चित करना उसे अन्याय नहीं लगा। वह यह भी सोचने की शक्ति खो बैठा कि मराल मनमानी कर रहा हैं, उसकी पुत्री के जीवन के साथ खेल रहा है। इसी कारण उसने अपनी पत्नी और पुत्री से यह बात छिपा रखी।

कालिन्दी के राजा माधवसेन को जैसे ही मालूम हुआ कि उसकी बेटी श्रीलेखा महल से रहस्यमय ढंग से गायब हो गई है तो मानों उस पर वज्रपात हो गया। धन-लोलुप होने के कारण कौंडिन्य के विरुद्ध मरालभूपति के षड्यंत्र में वह पहले ही शामिल हो चुका था। श्रीलेखा से चक्रभूपति के विवाह के लिए भी वह राजी हो गया था। वास्तव में, मरालभूपति और चक्रभूपति उसके महल में मौजूद थे और वाग्दान समारोह किसी भी शुभ मुहूर्त्त में होने ही वाला था। माधवसेन ने अपने नये मित्र मरालभूपति की सलाह पर इस सारी योजना को अपनी पत्नी से भी गुप्त रखा था, ताकि विरोध करने का उसे अवसर न मिल सके।

लेकिन रानी वसुमती ने बुद्धि और युक्ति में पति को भी मात कर दिया। जिस दिन मरालभूपति ने माधवसेन को निमंत्रित किया था और उसे अचानक इतना मान-सम्मान दिया था, उसी समय उसे मरालभूपति की नीयत पर सन्देह हो गया था। उसे अपने पति की कमजोरी भी मालूम थी। मरालभूपति ने कौंडिन्य राज्य से लूट में मिलनेवाले खजानों का एक अच्छा भाग उसे देने का लालच दिया था। कौंडिन्य जीत लेने पर राज्य का एक बहुत बड़ा क्षेत्र भी उसे देने का वचन दिया गया था।

''मेरे दोस्त, कौंडिन्य का खजाना हम सब की सम्पति है। हमारे पूर्वजों ने महाराज पौरस्वत को भेंट-स्वरूप प्रचुर मात्रा में धन-दौलत दिया था। अपने पूर्वजों की खोई सम्पत्ति को फिर से प्राप्त करने में क्या बुराई है।'' इस प्रकार मरालभूपति तर्क प्रस्तुत करता और माधवसेन को उसकी बात पर्याप्त युक्तियुक्त लगती।

रानी वसुमती ने अपने पति और मराल भूपति के बीच हुई गुप्त वार्ता जानने के लिए कुछ गुप्तचरों को नियुक्त किया था। जब उसे उनके षड्यंत्रों की जानकारी हुई तो वह विचलित और क्रोधित हो गई। उसे यह भी पता चला कि राजकुमार चक्रभूपति अशिष्ट और स्वार्थी है। ऐसे दुष्ट राजकुमार के हाथ में अपनी सुसंस्कृत और संवेदनशील श्रीलेखा का हाथ वह कभी नहीं देना चाहेगी।

किसी भी स्थिति में उसने उनके षड्यंत्र का भंग करने का निश्चय किया। वह अपने पति को कैसे समझाये? उससे मराल भूपति के कुतंत्रों के बारे में कैसे कहे? वह तो अब उनके भविष्य की योजनाओं का भागीदार बन चुका। राज्य को और विस्तृत करने तथा और संपन्न बनने के सपने देख रहा था। यह भी भूल गया कि जिस राजा पर वह मराल भूपति की मदद लेकर आक्रमण करने जा रहा है, वह उसका शुभचिंतक व निकट बंधु है।

लसुमती ने श्रीलेखा को विश्वास में लिया और पिता की सारी गुप्त योजना उसे बता दी। यह सुन कर श्रीलेखा स्तंभित रह गई। फिर साहस बटोर कर कहा,-"माँ, मैं मर जाऊँगी पर चक्रभूपति से कदापि विवाह नहीं करूँगी। माँ, तुम तो जानती ही हो कि मैं और विजयदत्त एक दूसरे को चाहते हैं। मेरा विवाह होगा तो विजयदत्त से ही होगा। किसी दूसरे से विवाह करने का प्रश्न ही नहीं उठता। मेरे हृदय में किसी और के लिए स्थान ही नहीं। आश्चर्य है कि पिताश्री ने ऐसा निर्णय क्यों लिया? पिताश्री भटक गये हैं। शत्रुओं की चाल में फंस गये हैं। उनपर सार्वभौम बनने का भूत सवार हो गया है। वे यह भी भूल गये कि विजयदत्त उनके शुभ चिंतक हैं और उनका बड़ा मान करते हैं। उन्हीं से संबंध जोडने में हमारी भलाई है। जब स्वयं पिताश्री मुझे नरक में ढकेलना चाहते हैं तो मैं क्यों जीऊँ, किसके लिए जीऊँ?"

"तुम्हें यह सब कुछ नहीं करना है मेरी बच्ची। हम दोनों मिल कर इस षड्यंत्र को विफल बना सकते हैं।" रानी ने उसका हौसला बढ़ाते हुए कहा और राजकुमारी को कौंडिन्य राज्य में गुप्त रूप से भेजने की व्यवस्था कर दी। कुछ खास और विश्वासपात्र दासियों को छोड़ कर किसी को इसकी भनक तक नहीं मिली।

और अन्त में, जब माधवसेन ने वाग्दान के लिए निश्चित शुभ दिन के पूर्व अपनी रानी से

श्रीलेखा के प्रस्तावित विवाह का रहस्योद्घाटन किया तो उसे यह बताया गया कि राजकुमारी का महल में कहीं पता नहीं है। वह किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। मरालभूपति और चक्रभूपति दोनों उसके महल में अतिथि थे। वाग्दान समारोह के पश्चात कौंडिन्य पर आक्रमण करने की योजना बनाई गई थी।

माधवसेन के महल में बैठे मरालभूपति को गुप्तचरों से यह सूचना मिली कि बिजयदत्त को पिता द्वारा गुरुकुल से तत्काल महल में वापस बुला लिया गया है। यह मरालभूपति और चक्रभूपति दोनों के लिए बुरी खबर थी, क्योंकि दोनों को मालूम था कि विजयदत्त बहुत बुद्धिमान और बहादुर है। वे इसकी अनुपस्थिति में ही कौंडिन्य पर आक्रमण करना चाहते थे।

''हमें शीघ्रातिशीघ्र कौंडिन्य पर आक्रमण कर देना चाहिए, ताकि बिजयदत्त और श्रीदत्त को युद्ध की तैयारी का समय न मिल सके।'' मरालभूपति ने अपने बेटे से कहा और महल में माधबसेन को इस आशय का संबाद भेज दिया।

माधवसेन को समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे। इस बीच उसे गुप्त रूप से सूचना दी गई कि उसकी बेटी श्रीदत्त की देख रेख में सुरक्षित है। उसने सोचा कि कौंडिन्य पर आक्रमण करने का अर्थ है अपनी बेटी को खतरे में डालना।

इस बदली हुई परिस्थिति में मरालभूपति का रुख क्या होगा, यह सोच कर वह भयभीत था। उसने अपने लाभ के लिए ही मुझसे दोस्ती का हाथ बढ़ाया था। चक्रभूपति श्रीलेखा से बिबाह करना चाहता था, लेकिन जब उसे यह मालूम होगा कि श्रीलेखा भागकर कौंडिन्य पहुँच चुकी है तो क्या वह मुझे माफ करेगा? यह मान लें कि इन सब के बावजूद मरालभूपति मेरा मित्र बना रहता है और हम दोनों मिलकर श्रीदत्त को परास्त कर देते हैं तो उसके बाद क्या होगा। मरालभूपति का उद्देश्य पूरा होने पर वह मेरी चिंता क्यों करेगा? चक्रभूपति से श्रीलेखा का बिबाह हो जाता तो परिस्थिति अवश्य कुछ भिन्न होती। लेकिन अब यह सम्भव नहीं हो सकता। बर्तमान स्थिति में वह मरालभूपति और श्रीदत्त दोनों की मैत्री से हाथ धो बैठेगा। और तब वह अकेला पड़ जायेगा और कोई भी उसके राज्य को हड़प लेगा। हो सकता है, मरालभूपति स्वयं श्रीलेखा के साथ अपने बेटे का बिबाह न हो पाने के कारण मेरी हत्या कर दे।

इस प्रकार सोचने के बाद अब वास्तविकता उसे स्पष्ट रूप से गोचर होने लगी। वह महसूस करने लगा कि मराल की मीठी बातों में आकर उससे कितनी बड़ी भूल हो गयी, उसे लगने लगा कि इस क्षण पर ही सही, सतर्कता बरती न जाए तो उसका पतन निश्चित है। साथ ही उसे लगा कि अपनी प्रिय पुत्री के साथ वह अन्याय करने जा रहा था। उसके जीवन को तहस-नहस करने पर तुल गया था। अब उसमें पश्चाताप की भावना घर कर गयी। वह गंभीर रूप से सोचने लग गया।

माधवसेन इन्हीं विचारों में खोया था, जब वसुमती ने उसके कक्ष में प्रवेश किया और हिम्मत देती हुई बोली,-''मरालभूपति के दुष्ट इरादों के प्रभाव में जो कुछ तुमने किया, उसे भूल जाओ। भूल का सुधार जब भी हो जाये, देर नहीं माननी चाहिए। मेरा तो दृढ़ बिश्वास है कि केवल विजयदत्त ही दक्षिण के सभी राज्यों को फिर से जीत कर सम्राट बनने की योग्यता रखता है। चक्रभूपति तो उसका सेवक भी बनने योग्य नहीं है। विजयदत्त के नेतृत्व में कौंडिन्य की सेना मरालभूपति को निश्चित रूप से हरा देगी।'' रानी ने बिश्वास के साथ कहा।

''किन्तु श्रीदत्त और विजयदत्त दोनों को मेरे प्रति घृणा हो गई होगी। उनके मन में जो शत्रुता का भाव आ गया है उसे हम अब कैसे बदल सकते हैं।'' माधवसेन ने कहा।

''उन्हें साफ-साफ सच्ची बात कह दो। कह दो कि हमारी बेटी क्योंकि आप के पास है, इसलिए हमारी शुभ कामनाएँ आप के साथ हैं। विजयदत्त

और श्रीलेखा को अपना आशीर्वाद भेज दो। अपना संबाद किसी दूत से नहीं बल्कि कबूतर द्वारा भेजो। यह अधिक निरापद और द्रुतगामीहोगा।'' रानी ने सलाह दी।

माधवसेन ने रानी की सलाह मान ली।

रानी ने पुनः कहा,-''कपटी मरालभूपति एक ऐसे राज्य को लूटना और नष्ट कर देना चाहता है जिसने उसका कुछ नहीं बिगाड़ा है। उसे सबक सिखाया जाना चाहिए। इसलिए अपनी सेना को गुप्त रूप से यह निर्देश दे दो कि मरालभूपति कौंडिन्य पर जैसे ही आक्रमण करे वैसे ही तुम्हारी सेना भी उसकी सेना पर आक्रमण कर दे। दो सेनाओं के बीच दब जाने से मरालभूपति की सेना के पाँव उखड़ जायेंगे। थोड़ी देर के लिए श्रीदत्त और विजयदत्त भ्रम में अवश्य पड़ जायेंगे, किन्तु

शीघ्र ही वे स्थिति को भाँप कर तुम्हारी इस चेष्टा के पीछे छिपे तुम्हारे सद्‌भाव की प्रशंसा करेंगे।''

''मैं सचमुच मरालभूपति और उसके बेटे की चालों में आ गया था। उनकी मीठी बातों ने और मेरी राज्य-आकांक्षा ने मुझे अंधा बना दिया। मैं सपनों में बह गया और सच को भुला दिया। मैं जब सोचता हूँ कि कितनी बडी भूल मुझसे होने वाली थी तो शर्म के मारे मेरा सिर झुक जाता है। मैं भी कैसा बाप हूँ, जो अपनी ही बेटी का गला घोंटने पर आमादा हो गया। तुमने मेरी आँखें खोल दीं। मैं शीघ्र ही संवाद भेजता हूँ।'' माधबसेन ने भय और ग्लानि से मुक्त होकर मुस्कुराते हुए कहा।

प्रातःकालीन सूर्य की सौम्य किरणें महाराज श्रीदत्त के महल के ऊपरी प्रकोष्ठ में उनके पलंग पर अभी झिलमिलाने लगी थीं कि एक श्वेत कपोत उनके कंधे पर आकर बैठ गया। उसकी गरदन से एक पत्र लटक रहा था। कौंडिन्य और कालिन्दी के मध्य संवादों का आदान-प्रदान बहुधा होता रहता था और इसके लिए कुछ कपोतों को प्रशिक्षित कर दिया गया था।

श्रीदत्त ने चिंतित मुद्रा में कपोत की गरदन से पत्र निकाल कर पढ़ा। शीघ्र ही चिंता की रेखाएँ मुस्कान में बदल गईं। उन्होंने विजयदत्त और श्रीलेखा को बुलाकर उन्हें पत्र देते हुए कहा,- ''बधाई मेरे बच्चो।''

विजयदत्त अपनी प्रसन्नता को छिपा न सका और खुशी से उछलते हुए बोला,- ''पिताश्री! चाचा माधबसेन के इस हृदय-परिवर्तन का मैं कितनी बेसब्री से इन्तजार कर रहा था। आखिर श्रीलेखा को वे कितना प्यार करते हैं और वसुमती मौसी भी मुझे कितना चाहती हैं!''

''आज का दिन हमारे लिए शुभ है। देखें, खुदाई में क्या होता है?'' श्रीदत्त ने आशंकित होते हुए कहा।

तीनों शीघ्र ही तैयार होकर महल की पूर्व दिशा में खुदाई के मौके पर पहुँचे। राजगुरु शिबानन्द के निरीक्षण में खुदाई का कार्य आरम्भ होने वाला था।

पवित्र शान्ति के वातावरण में राजगुरु ने निर्धारित स्थान पर एक बृत खींचा और उसके केन्द्र का पवित्र जल से अभिषेक किया। साठ श्रमिकों ने तुरन्त खुदाई आरम्भ कर दी।

दोपहर तक कार्य चलता रहा। राजा श्रीदत्त,

राजकुमार और श्रीलेखा तीनों वहाँ मौजूद थे।

दोपहर के भोजनोपरान्त जब कार्य पुनः आरम्भ हुआ तो राजगुरु ने राजा और राजकुमार को शीघ्र ही मौके पर बुला भेजा। वहाँ के दृश्य को देख कर वे दोनों स्तंभित रह गये। तेरह फुट गहराई तक खुदाई हो चुकी थी। उसके अन्दर पन्द्रह-सोलह फुट लम्बा काला नाग कुंडली मार कर फ़न फैलाए बैठा था। यद्यपि यह जीवित था किन्तु मूर्तिवत् निश्चेष्ट था।

राजगुरु ने महाराज और राजकुमार को अलग ले जाकर बताया कि ध्यान में मैंने इसी सर्प को देखा था। यह साधारण सर्प नहीं है, बल्कि यह गुह्य अथवा मंत्र-जनित है। पुराने समय में जमीन के अन्दर गाड़ कर सम्पत्ति रखनेवाले तांत्रिक की सहायता से ऐसे सर्पों का सृजन किया करते थे। ये गुप्त धन की रक्षा करते हैं, सृजक के आदेश का पालन करते हैं।

''आश्चर्य!'' राजकुमार ने विस्मयपूर्वक कहा।

राजा ने कहा ''आपकी भविष्यबाणी सच साबित हो रही है गुरुवर। लगता है कि भविष्य में हमारा शुभ ही शुभ होगा। हमारे शत्रुओं का पतन निश्चित है।''

''निस्सन्देह यह विस्मयजनक है। हम लोगों ने दोपहर के भोजनोपरान्त खुदाई शुरू ही की थी कि भयंकर फुत्कार के साथ सर्प प्रकट हो गया। श्रमिक गद्ढे से तुरन्त निकल कर बाहर आ गये। सर्प की सांस से असहनीय गर्म हवा आ रही थी। मैंने निकट जाकर उसकी उष्णता महसूस की और शीघ्र ही जान लिया कि यह मांत्रिक सर्प है। तभी मैंने सम्वाद भेज कर आप लोगों को यहाँ बुला भेजा।'' राजगुरु ने समझाते हुए कहा।

''इस भयंकर रक्षक से हम कैसे मुक्त हो सकते हैं?'' महाराज ने चिंतित स्वर में पूछा।

''ऐसी रचनाएँ मंत्रों के द्वारा ही निराकृत की जाती हैं। किन्तु, यदि वह खजाना, जिसका यह रक्षक है, किसी व्यक्ति विशेष का है, तो यह सिर्फ़ उसके कहने पर ही जा सकता है। किसी और के आदेश का पालन नहीं करेगा। फिर भी, हम सब शुभ की ही आशा करें।'' राजगुरु इतना कह कर मौन हो गये। फिर बिजयदत्त की ओर मुड़ कर कहा,-''मेरे उदात्त और बीर पुत्र! सर्प का सामना करने के लिए और किसी भी अप्रत्याशित स्थिति से निबटने के लिए तैयार रहो।''

भारत क

एक महान सभ्यता की झाँकियाँ :
युग-युग में सत्य के लिए इसकी गौरवमयी खोज

२-वर्षा की एक रात में स्नातक हो जाना

"ग्रैंड पा, यह शरारती लड़की मुझे यह सिद्ध करने के लिए चुनौती दे रही है कि आर्यों ने भारत पर आक्रमण नहीं किया," संदीप ने अपनी छोटी प्यारी बहन चमेली को देवनाथ के कमरे में घसीट कर लाते हुए शिकायत की।

देवनाथ ने नजर उठाकर उनकी ओर देखा और अपने सामने की खुली पुस्तक बन्द कर दी।

"संदीप, तुम चमेली से यह साबित करने के लिए क्यों नहीं कहते कि वह होनोलुलु या मेडागास्कर से नहीं आई है?" ग्रैंड पा ने कहा।

"मैं सदा यहीं थी। मैं इसी घर की हूँ।" चमेली ने दावा किया।

"बिल्कुल ठीक! यदि मैं कहूँ कि तुम इस घर की रहनेवाली नहीं हो, एक दिन होनोलुलु या मेडागास्कर से इस घर में टपक पड़ी तो मुझे यह प्रमाणित करना होगा। यही बात भारतीयों के साथ लागू होती है। वे हमेशा यहीं थे। किसी बात से यह संकेत नहीं मिलता कि वे हिमालय के पार से यहाँ आये। उनका अपना प्राचीन साहित्य, जो विश्व का प्राचीनतम साहित्य है, कहीं एक बार भी नहीं कहता कि उनका घर कहीं और था जिसे वे पीछे छोड़ कर यहाँ आ गये। कोई आख्यान, कोई परम्परा, कोई ऐतिहासिक तथ्य कुछ भी इस दिशा में इशारा नहीं करता। बल्कि यह विश्वास करने के कई कारण मिलते हैं कि प्राचीन भारतीयों ने सुदूर देशों की खोज की और उनकी सभ्यताओं पर अपनी संस्कृति और अपने धर्म की छाप छोड़ी।" ग्रैंड पा देवनाथ ने कहा।

"लेकिन, ग्रैंड पा, इस मत को बल कैसे मिला कि आर्य किसी अन्य सुदूर देश से भारत में आये।" चमेली ने पूछा।

"यह सिद्धान्त अंग्रेजों ने फैलाया जिन्होंने हम पर शासन किया। शायद वे यह कहना चाहते थे कि बाहर से आर्यों का भारत में आना और यहाँ उनका राज्य करना अस्वाभाविक नहीं था, क्योंकि वास्तव में भारतीय आबादी का एक बहुत बड़ा भाग दूसरे देशों से यहाँ आया था। दुख की बात यह है कि हमारे अपने इतिहासकारों ने इस सिद्धान्त पर कभी उंगली नहीं उठाई।" ग्रैंड पा ने अफसोस के साथ कहा।

संदीप को अचानक उसके मित्रों ने बुला लिया। वे लोग अपने विद्यालय के वार्षिक समारोह की

ी गाथा

तैयारी कर रहे थे। उन्हें अपने अध्यापकों के साथ बैठक में योजना को अन्तिम रूप देना था।

''ग्रैंड पा, कल आपने संदीप को नचिकेता की कथा सुनाई थी। उसने बड़े गर्व के साथ उस कहानी को मुझे सुनाया। कृपया पुराकाल की वैसी ही कोई कथा मुझे भी सुना दें जिसे उसके लौटने पर मैं भी उसे सुना सकूं।'' चमेली ने अनुरोध किया।

''ठीक है। मैं एक ऐसी कहानी सुनाता हूं जो तुम्हें प्राचीन भारत के अध्यापकों और छात्रों के बारे में बोध करायेगी। वैसे, यह कहानी नहीं है, बल्कि एक छात्र के जीवन की सची घटना है जो बाद में एक बहुत बड़ा ऋषि बन गया।''

इतना कह कर देवनाथ ने कहना शुरू किया:

धौम्य नाम के एक बड़े आचार्य थे जो एक मनोरम घाटी में एक विद्यालय का संचालन करते थे। विद्यालय की पृष्ठभूमि में सुन्दर पहाड़ियाँ थीं और सामने जंगल का विस्तार था। तब विद्यालयों को गुरुकुल या गुरु का घर कहा जाता था। अपने घर से दूर छात्र अपने आचार्य के साथ प्राकृतिक सौन्दर्य से ओतप्रोत वातावरण में रहते थे।

गुरुकुल प्रायः एक महत्तर संस्था, जिसे आश्रम कहा जाता था, का भाग होता था। गुरु, आश्रम और गुरुकुल दोनों का प्रधान होता था। छात्रों के अतिरिक्त योग का अभ्यास करनेवाले भी आश्रम के वासी होते थे।

चमेली ने बीच में प्रश्न किया,-''ग्रैंड पा, योग क्या होता है, क्या बतायेंगे? लेकिन अभी नहीं। संदीप के लौटने तक मैं पहले कहानी सुन लेना चाहूँगी।''

देवनाथ हँसते हुए बोले,-''बहुत अच्छा। जब तुम्हारा भाई आ जायेगा, तभी योग के बारे में बताऊँगा। तुम्हें उसे यह ज्ञान देने में परेशानी नहीं होगी।''

हाँ तो, कहानी पर वापस आते हैं। धौम्य ऋषि के आश्रम के निकटवर्ती जंगल के केन्द्र में एक झील थी। झील के पास आश्रम की कुछ कृष्य
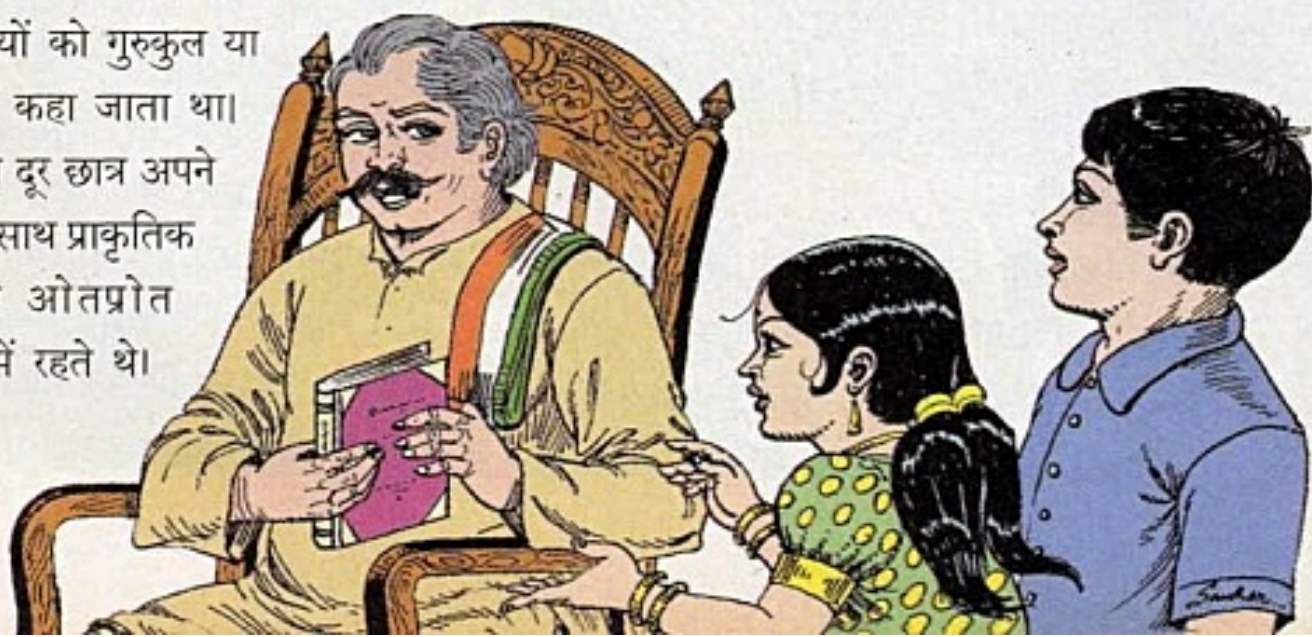
भूमि थी जिसमें आश्रम वासी तथा छात्र अन्न उपजाते थे।

एक दिन बहुत भारी वर्षा हुई। दूसरे दिन और रात में भी वर्षा नहीं रुकी। तब आचार्य धौम्य चिन्तित स्वर में बोले,-"आशा है, झील का पानी बाँध के ऊपर तक नहीं आयेगा और फसल डूबने

से बच जायेगी।

आश्रम के छात्रों में आरुणि सबसे अधिक होनहार और गुरु का विश्वास पात्र था। उसका अध्ययन पूरा हो चुका था। शस्त्रों के ज्ञान में उसने प्रवीणता अर्जित कर ली थी और वह दर्शन की टीका में निष्णात था। योगासनों में भी उसे दक्षता प्राप्त थी। लेकिन अभी आचार्य ने उसे घर जाने का आदेश नहीं दिया था। जैसे ही आरुणि को आचार्य की चिंता के विषय में ज्ञात हुआ, वह तुरन्त खेतों का निरीक्षण करने निकल पड़ा। वर्षा कुछ थम गई थी। दो काले बादलों के बीच चाँद चमकता दिखाई पड़ा। चाँदनी के प्रकाश में आरुणि ने खेतों की सही स्थिति का अनुमान लगा लिया।

झील का बाँध एक स्थान से टूट गया था और खेतों में पानी भरने लगा था। आरुणि ने खेत से मिट्टी निकाल कर टूटे हुए बाँध की मरम्मत करने का प्रयास किया। किन्तु बाँध का कटाव बढ़ता गया और झील का पानी और तेजी से खेत के अन्दर भरने लगा।

आरुणि ने सोचा कि आश्रम से अन्य साथियों को लाकर बाँध की ठीक से मरम्मत कर दे। लेकिन क्या उसके पास इतना समय था? एक-एक पल उसके लिए भारी संकट बनता जा रहा था। उसने स्थिति की गंभीरता पर क्षण भर के लिए अपने मन को एकाग्र किया और उसने निर्णय ले लिया।

टूटे हुए मेड़ पर वह स्वयं लेट गया। यद्यपि बादल फिर घिर आये और आँधी के साथ वर्षा होती रही, लेकिन झील का पानी खेतों में जाने से रुक गया। वर्षा की ठंढी हवा और पानी से आरुणि का शरीर अकड़ गया और वह अचेत हो गया।

जब भोर तक आरुणि नहीं लौटा तो आचार्य स्वयं अन्य शिष्यों के पास खेत पर पहुँचे और

आरुणि को टूटे हुए बाँध के स्थान पर अचेतावस्था में देख कर स्तंभित रह गये।

उसे तुरन्त आश्रम में लाकर कुछ छात्रों ने उसकी सेवा की जब कि कुछ अन्य शिष्यों ने बाँध की मरम्मत की। जब गुरु की देख रेख में आरुणि की चेतना वापस लौटी तो गुरु ने कहा, -"वत्स, तुम्हारी शिक्षा पूरी हो गई। आज तुमने विशिष्टता के साथ स्नातक की उपाधि अर्जित कर ली।"

आरुणि आचार्य के प्रति कृतज्ञता में नत मस्तक था।

"क्या उत्तम चरित्र है!" चमेली ने विस्मयपूर्वक कहा।

"यह अच्छी बात है कि कहानी तुम्हें पसन्द आई। मैं आशा करता हूँ कि तुम्हें यह स्पष्ट हो गया होगा कि आरुणि ने शास्त्रों के उत्तर देने की अपेक्षा एक भिन्न प्रकार की परीक्षा उत्तीर्ण की। उसके कार्य से यह तुरन्त पता चल गया कि विद्वान होते हुए भी वह कितना विनम्र है। आवश्यकता पड़ने पर वह शारीरिक संकट झेलने को तैयार हो गया। अपने उद्देश्य यानी फसल की रक्षा का उसका दृढ़ संकल्प अनुकरणीय है। सच्ची शिक्षा हमें आदर्शवादी और यथार्थवादी दोनों ही बनना सिखाती है। यह हमें अपने अहंकार के सीमित व्यक्तित्व से ऊपर उठना सिखाती है और हमारे हृदय में त्याग और बलिदान की भावना जगाती है। आरुणि की सहज और अनायास क्रिया से ऐसा लगता है कि ये सारे गुण उन्होंने अपने चरित्र में सिद्ध कर लिये थे। क्या तुमने समझ लिया?"

"जी हाँ ग्रैंड पा। धन्यवाद। अब मैं अपने भाई को यह कहानी सुना सकती हूँ।" चमेली खुशी से उछलती हुई बोली।

"लेकिन क्या सिर्फ इसीलिए मैंने तुम्हें यह कहानी सुनाई? क्या आरुणि के गुणों को अपने जीवन में उतारने की कोशिश नहीं करोगी?"

"करूँगी ग्रैंड पा! बहुत बहुत धन्यवाद!"

सुस्त

मंधार नामक गाँव में एक छोटा किसान रहता था। उसका नाम था पवन। उसके पास सिर्फ़ दो एकड़ जमीन थी। उससे मुश्किल से वह खाने भर अनाज उपजा पाता था। वैसे भी वह आलसी था और परिश्रम करने से कतराता था।

चालीस साल की उम्र में अचानक उसकी पत्नी का देहान्त हो गया। उसकी दो विवाह योग्य बेटियाँ थीं। दोनों की शादी गाँव के ही दो युवकों से उन्होंने कर दी। विवाह में उसे दहेज में काफी रुपये देने पड़े। इसलिए उसे दोनों एकड़ जमीन बेच देनी पड़ी।

अब आजीविका के लिए मजदूरी के सिवा उसके पास कोई अन्य साधन नहीं था। लेकिन आदत से आलसी होने के कारण उसे मजदूरी का काम भी आसानी से नहीं मिल पाता। ढलती उम्र के कारण दिनोंदिन स्वास्थ्य भी गिरता जा रहा था। अन्त में वह घर की चीजें बेच-बेच कर गुजारा करने लगा।

जब पवन की बेटियों को उसकी दयनीय हालत के बारे में पता चला तो उन दोनों ने उसे अपने घरों में खाने-रहने का अनुरोध किया। किन्तु उसे अपमान समझ कर उनके यहाँ रहने से इनकार कर दिया। तब दोनों बेटियाँ बारी-बारी से अपने घरों से खाना लाकर अपने पिता को खिलाने लगीं।

एक दिन रात में पवन के घर में एक चोर घुस आया। घर के सारे सामान बेचकर वह पहले ही खा चुका था। इसलिए चोर के लिए घर में कुछ भी नहीं बचा। जब बहुत ढूंढने पर भी उसे कुछ नहीं मिला तो वह झुंझला कर बोला, ''छी, यह कैसा दरिद्र का घर है। मेरा आज का समय व्यर्थ में नष्ट हो गया।'' और क्रोध में दरवाजे को पीटता हुआ उसे खुला ही छोड़ कर चोर बाहर चला गया।

दरवाजे की आवाज सुन कर पवन की नींद टूट गई। उसने चोर को आवाज देते हुए कहा, -''बाबूजी, जरा दरवाजा बंद करते जाना।''

चोर नाराज होता हुआ बोला, -''मैंने कितने ही घरों में चोरियाँ कीं लेकिन तुम्हारे जैसा सुस्त घर का मालिक आज तक कहीं नहीं देखा। चोर को देख कर भी सोये पड़े हो। इसीलिए तो इतने तुम दरिद्र हो।''

पवन लेटे-लेटे बोला, - ''मेहनत करने का भी क्या लाभ? मेहनत करके कुछ कमाऊँ तो तुम्हारे जैसे चोर उठा कर ले जायेंगे।''
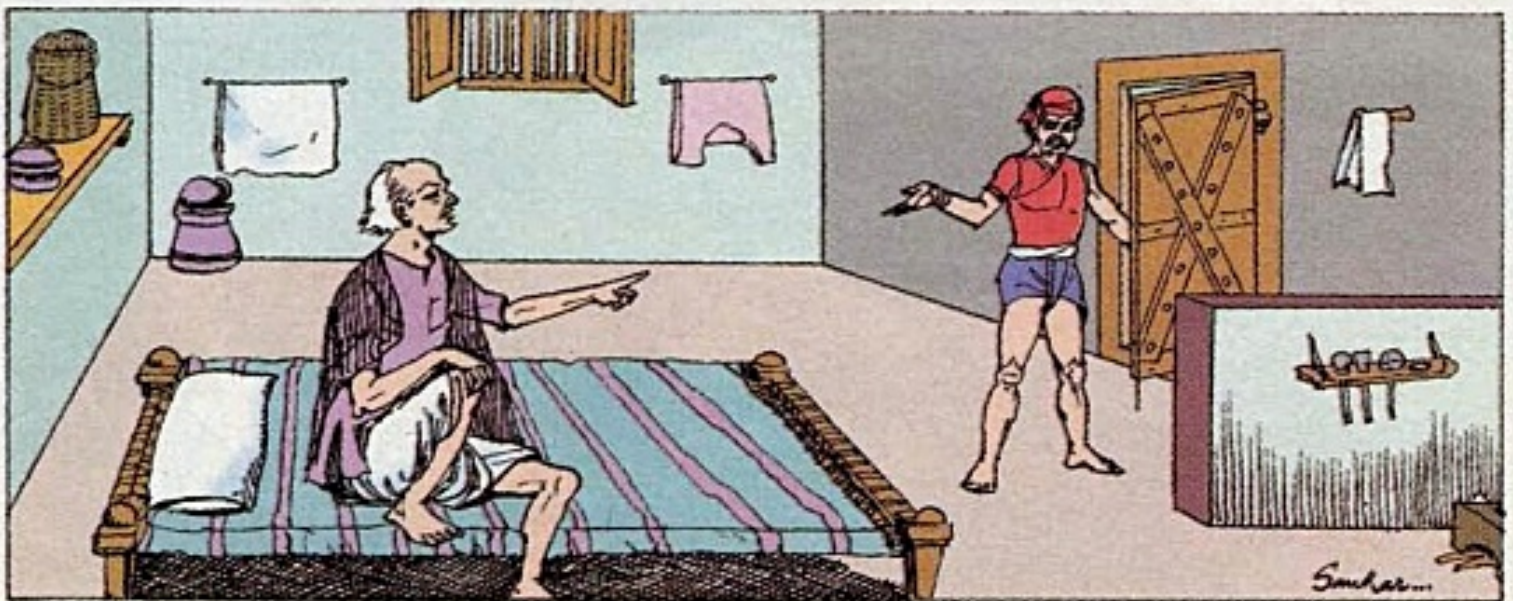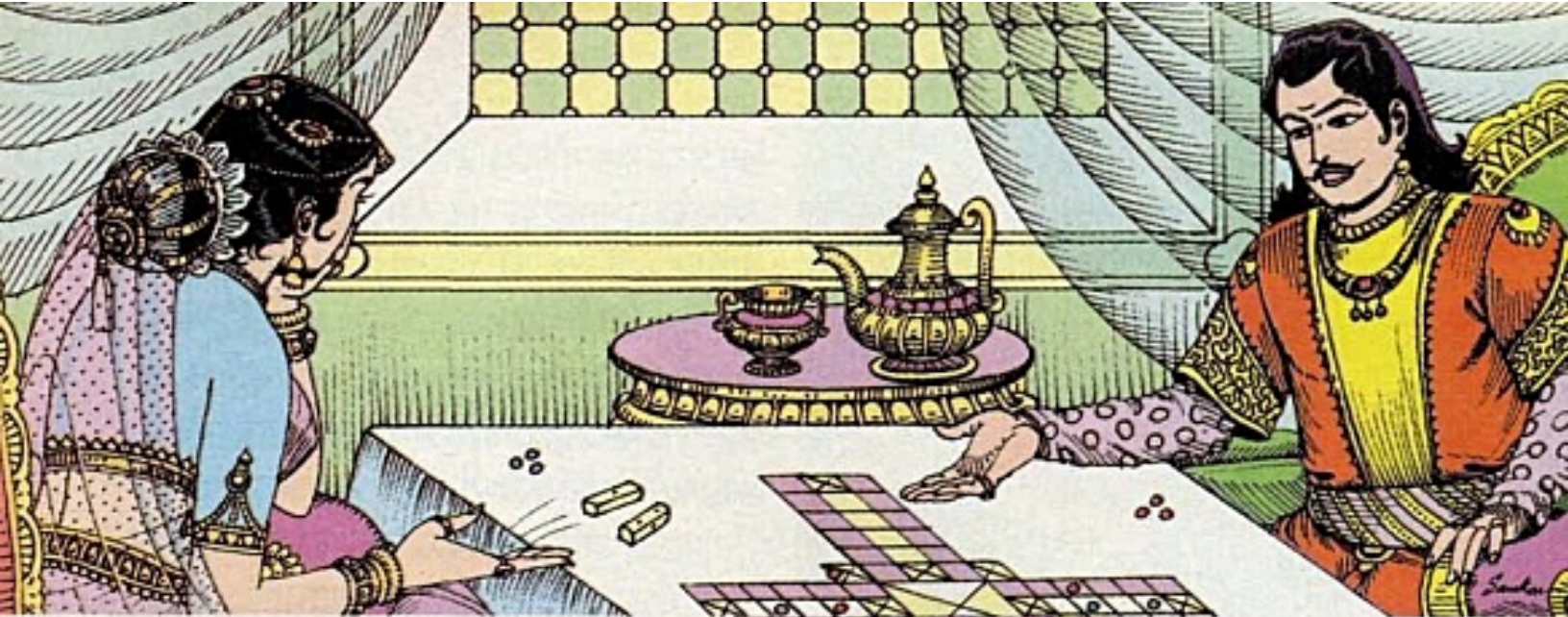
खेल का मज़ा

सुवर्ण गिरि के महाराजा रत्नपाल शतरंज के बड़े शौकीन थे। जब भी उन्हें अपने राज-काज से समय मिलता, शतरंज अवश्य खेलते। इस खेल में उन्हें विशेष दक्षता प्राप्त थी।

प्राय: वे अपने मंत्री सुधाम के साथ ही शतरंज खेलते। लेकिन कभी-कभी महारानी विनीला देवी या अपने सेनापति सूर्यवर्मा के साथ भी खेल लेते। ये चाहे किसी के साथ खेलते, हर बार जीत इन्हीं की होती। अपनी जीत पर ये बहुत आनंद और गर्व का अनुभव करते। विशेषकर सुधाम को हरा कर इन्हें सबसे ज्यादा खुशी होती क्योंकि ये उन्हें अपने बराबर का खिलाड़ी मानते थे।

एक बार महाराजा शतरंज के खेल में सुधाम से हार गये। हार की कड़वाहट का स्वाद उन्हें पहली बार मालूम हुआ। वे इसे सहन न कर सके और क्रोध से दाँत पीसने लगे। जब क्रोध उनके नियंत्रण से बाहर हो गया तो उन्होंने शतरंज की बिसात फेंक दी और उठ कर महल के अन्दर चले गये।

दूसरे दिन, क्रोध शान्त होने पर उन्हें अपने व्यवहार पर ग्लानि हुई और उन्होंने मंत्री सुधाम के समक्ष इसके लिए खेद प्रकट किया। दोनों फिर शतरंज खेलने बैठ गये। इस बार महाराज की जीत हुई। उनका चेहरा दमक उठा। उन्होंने खुशी में दूसरी बाजी भी खेलने के लिए मंत्री से कहा। लेकिन महाराज दूसरी बाजी हार गये। वे फिर तमतमा उठे। लेकिन इस बार उन्होंने क्रोध पर नियंत्रण रखा और उसे प्रकट किये बिना महल के अन्दर चले गये।

दूसरे दिन भी महाराज हार गये, लेकिन क्रोधित नहीं हुए। हाँ, हार का दुख अवश्य था। फिर भी सुधाम के साथ शतरंज खेलते रहे, और हारते रहे। निरन्तर हारते रहने से उनमें खेल का उत्साह नहीं रहा। राज-काज के समय भी उदास रहने लगे। चेहरा हर समय मुरझाया-सा रहने लगा।

मंत्री सुधाम को उनकी उदासी का कारण समझने में देर नहीं लगी। अपने मंत्री से निरन्तर हारते रहने से ही महाराज के अहं को चोट लगी है, मंत्री ने मन में सोचा। इसीलिए दूसरे दिन के खेलमें वह जान-बूझ कर महाराज से हार गया। महाराज का चेहरा पहले की तरह ही खिल उठा। मंत्री को

यह देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई कि राजा की खुशी लौट आई है। उसके बाद से महाराज खेल में मंत्री को सदा हराते रहे।

महाराज रत्नपाल कुछ दिनों तक तो जीत का आनन्द अनुभव करते रहे, लेकिन धीरे-धीरे वह आनन्द फीका पड़ने लगा। मंत्री को हराने में जो मज़ा उन्हें पहले आता था, अब नहीं आता। पहले तो इस खेल से ऊब गये। बाद में चिढ़ने भी लगे और खेलना बन्द कर दिया। महाराज स्वयं भी नहीं जान पाये कि ऐसा क्यों हुआ, इसलिए उन्होंने अपने मन की स्थिति मंत्री को भी बतायी।

महाराज की उदासी से मंत्री को भी चिन्ता हो गई। बहुत सोच-विचार कर उसने महाराज से कहा,-''राजन! शतरंज का एक निष्णात खिलाड़ी आनन्द कई राज्यों में श्रेष्ठ खिलाड़ियों को हरा कर अभी हमारे राज्य में पर्यटन कर रहा है। वह इस खेल के मनोविज्ञान से भी परिचित है। शायद वह बता सके कि आप जैसे शतरंज के शौकीन और दक्ष खिलाड़ी को इस खेल से यकायक विरक्ति-सी क्यों हो गई। यदि आप आज्ञा दें तो उसे बुलाऊँ?'' महाराजा रत्नपाल मंत्री की सलाह से सहमत हो गये। मंत्री सुधाम ने आनन्द को निमंत्रित कर महाराज के समक्ष प्रस्तुत कर दिया। आनन्द ने महाराज से पूरी बात सुनने के बाद कहा,-''महाराज! यदि आप एक बार मेरे साथ शतरंज खेलें तो आप की समस्या का समाधान शायद मैं बता पाऊँ।''

मंत्री की उपस्थिति में महाराज रत्नपाल और आनन्द के बीच शतरंज का खेल आयोजित किया गया। राजा ने पूरी रुचि और सावधानी से अपनी चालें चलीं। और आनन्द को मात कर दिया। महाराज की खुशी का ठिकाना न रहा। आनन्द को हरा हर आज उन्हें जितना आनन्द आया, उतना अपने मंत्री को हरा कर भी कभी अनुभव नहीं किया था। लेकिन यह क्षणिक आनन्द था। इस खेल के बाद जितनी बार भी राजा ने आनन्द के साथ शतरंज खेला, हारते रहे। वे पुनः उदास हो गये। खेल के प्रति उनका उत्साह जाता रहा। हर खेल में उन्हें जीत की आशा रहती परन्तु अन्त में आनन्द से हार जाते।

मंत्री सुधाम ने स्थिति को संभालने के लिए महाराज की ओर से चालें चलीं और आनन्द को आसानी से हरा दिया। आनन्द ने मंत्री के साथ कई बार खेला लेकिन हर बार हार गया। महाराज को इस पर बड़ी खुशी हुई। परन्तु न तो मंत्री को अपनी जीत पर खुशी हुई और न आनन्द को अपनी हार का दुख हुआ।

खेल के बाद आनन्द ने महाराज से कहा,-''आज्ञा दें तो अब मैं आप की समस्या के समाधान में अपने विचार आप के समक्ष रखूँ?''

महाराज की आज्ञा पाकर उन्होंने कहा,-"किसी भी खेल में खिलाड़ी को दो प्रकार से आनन्द मिलता है। एक तो, खेल में जीतने से खिलाड़ी को आनन्द आता है। और दूसरा, हार-जीत की चाह से अलग होकर, उससे मुक्त होकर, खेल भावना से खेल खेलने में, खेल में निमग्न हो जाने में आनन्द आता है। जीत में आनन्द पानेवाला खिलाड़ी हर समय यही सोचता है कि कैसे किसी प्रकार जीत जाऊँ। खेल से उसकी एकाग्रता हट कर जीत पर केन्द्रित हो जाती है। खेल में सावधानी की मात्रा कम हो जाती है। जीत से प्राप्त होनेवाले आनन्द की आशा अफीम की तरह काम करती है और खिलाड़ी का विवेक हर लेती है। इसीलिए जीत जाने पर वह खुशी से पागल हो जाता है और हार जाने पर ग़म की गहराई में डूब जाता है।

"खेल-भावना से खेल खेलने में खिलाड़ी खेल में डूब जाता है। उसकी तकनीक, उसकी बारीकी, उसकी गहराई में वह इतना निमग्न हो जाता है कि जीत-हार पर विचार करने के लिए उसके पास अवकाश नहीं रहता। वह खेल में भाग लेने के लिए खेलता है। प्रतिस्पर्धी के खेल को ध्यान से देखता है, उसकी बारीकियों को ग्रहण करता है और उसका प्रति-समाधान विकसित करने का प्रयास करता है, जिससे उसे मात दे सके। जीत जाने पर उसे अवश्य खुशी होती है लेकिन हार जाने पर उदास नहीं होता। बल्कि प्रतिस्पर्धी की खुशी में शामिल होता है, उसके खेल की क्षमता की प्रशंसा करता है और उसे बधाई देता है तथा अगली बार अधिक उत्साह और सावधानी के साथ खेलने का संकल्प लेता है। इस भावना से खेलने से खिलाड़ी की योग्यता सदा विकसित होती रहती है। इसलिए इस भावना से खेल का आनन्द औषधि के समान होता है।...और" आनन्द इतना कह कर रुक गया।

महाराज रत्नपाल बड़े ध्यान से आनन्द की बातें सुन रहे थे। उन्हें लगा कि आनन्द शतरंज का खिलाड़ी मात्र नहीं है, खेल मनोविज्ञान का विशेषज्ञ भी है। खेल की चालों, उसकी बारीकियों के साथ-साथ खिलाड़ी की मनःस्थिति को भी समझता है। इसलिए उन्होंने आनन्द से कहा,-"रुक क्यों गये आनन्द? तुम कुछ और कहना चाह रहे हो। कहो, कहो न!"

"कहीं मेरी बातों से आप को परेशानी तो नहीं हो रही है, इसलिए मैं रुक गया था।" आनन्द ने कहा।

महाराज रत्नपाल ने बड़ी दृढ़ता से कहा,-"नहीं, बिल्कुल नहीं। मैं बहुत रुचि के साथ तुम्हारी बात सुन रहा हूँ। खिलाड़ियों के मनोभावों को भी जानना जरूरी समझता हूँ।"

आनन्द ने निःसंकोच होकर कहा,-"और आप की उदासी का कारण भी मेरी इन्हीं बातों में छिपी

है। आप के खेल का आनन्द जीत पर केन्द्रित रहता है। इसलिए मंत्री से हारने के बाद आप या तो क्रोधित हो जाते हैं या उदास। जीत में आनन्द का एक कारण और होता है। हारे हुए प्रतिस्पर्धी के उतरे हुए चेहरे, उनकी विवशता, उनकी उदासी से जीतने वाला गर्व से फूला नहीं समाता। लेकिन हारा हुआ खिलाड़ी यदि उदास या दुखी नहीं होता और समभाव बनाये रखता है तो जीतने वाले की खुशी भी जाती रहती है। शायद यही कारण है कि मंत्री को बार-बार हराने के बाद भी आप को खुशी नहीं होती, क्योंकि हारने के बावजूद उन्हें परेशानी नहीं होती, बल्कि आप की जीत की खुशी उन्हें भी होती है।''

महाराज रत्नपाल को आनन्द की बातों में सचाई की लौ दिखाई पड़ी, जिसने उसके मन के अन्धकार में छिपे उदासी के कारणों को उजागर कर दिया। वे आनन्द द्वारा दिये गये खिलाड़ी के मनोभावों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण से बहुत प्रभावित हुए। फिर भी उन्होंने प्रश्न किया,-''निस्सन्देह तुम मुझसे श्रेष्ठ खिलाड़ी हो, इसीलिए मैं तुमसे हारता रहा। फिर भी, पहली बाजी तुमने क्यों खो दी?''

आनन्द ने मुस्कुराते हुए कहा,-''महाराज! आप के खेल में कोई दोष नहीं है। आप शतरंज के एक असाधारण खिलाड़ी हैं। आप से, अच्छा से अच्छा खिलाड़ी भी हार सकता है। मैं भी पहली बार आप से हार गया, किन्तु निराश नहीं हुआ, उदास नहीं हुआ। बल्कि पहले खेल में आप के खेलने की पद्धति, रणनीति, चाल के तरीकों को देखा, परखा। फिर बाद के खेलों में मैंने भी उसी के अनुसार अपनी रणनीति बदल दी। आपने मेरी पद्धतियों पर ध्यान नहीं दिया। इसीलिए उसका प्रतिकार नहीं किया और फलतः हारते रहे।''

''तुम्हें शतरंज के खेल और इसके मनोविज्ञान का इतना गहरा ज्ञान कहाँ से मिला, क्या मैं पूछ सकता हूँ?'' महाराज ने आनन्द से प्रश्न किया।

आनन्द मंत्री सुधाम की ओर देखते हुए विनम्र भाव से बोला,-'यह सब मैंने अपने गुरु और पिताश्री के चरणों में सीखा है, जो कोई और नहीं, आप के ही मंत्री सुधाम हैं।''

इतना कह कर वह महाराज के समक्ष खड़ा हो गया और उनका चरण-स्पर्श कर उसने क्षमा मांगी।

महाराज को फिर से शतरंज में पूर्ववत् दिलचस्पी हो गई और जय-पराजय के भाव से मुक्त होकर, खेल भावना से, हर दिन आनन्द के साथ शतरंज खेलते रहे और खेल का सच्चा आनन्द लेते रहे।

कावेरी-तट की यात्रा - 5

बकरी-कुदान

वर्णन : जयंती महालिंगम्

चित्र : गौतम सेन

शिवसमुद्रम् से आगे बढ़ने पर अर्कावती नाम की सहायक नदी कनकपुरा पर कावेरी में आ मिलती है. यह स्थान बेंगलूर से 113 कि.मी. की दूरी पर है. अर्कावती नंदीदुर्ग के पहाड़ों से निकलती है और बेंगलूर को पानी मुहैया करने वाला चामराजसागर बांध इसी पर बंधा हुआ है. कावेरी-अर्कावती संगम घने जंगलों से ढके इलाके में है. इन जंगलों में रेशम के कीड़े पालनेवाले फार्म बहुतायत से हैं. सारे रास्ते में आप बांस की विशाल टट्टियों पर रेशम के कोयों को पलते देख सकते हैं.

यहां कावेरी टेढ़े-मेढ़े पथरीले पाट में बहती है, मानो कोई नटखट बालिका लुकाछिपी का खेल खेल रही हो. कहीं कावेरी की धारा अजीबोगरीब आकृतियोंवाली चट्टानों के बीच चांदी की रेखा-सी चमकती नजर आती है. कहीं वह गहरे खड्ड में एकाएक गायब हो जाती और कई सौ मीटर बाद फिर अचानक प्रकट होती है. पर जो चीज कावेरी से भी अधिक हमारा ध्यान खींचती है वह है चट्टानों से पटी हुई यहां की जमीन. ये चट्टानें कई रंगों की हैं – नीली, गुलाबी, काली व सफेद. निरंतर बहते पानी ने इन्हें तराश कर अजीबोगरीब शक्लें दे दी हैं. कोई चट्टान हाथी के पांव जैसी है, कोई विशाल मटके जैसी, और कोई एकदम गोलाकार. उन सबकी सतहें दर्पण की तरह चिकनी हैं और चमचमाती हुईं.

नदी के तीव्र प्रवाह के बीच, जरा हट कर एक चट्टानी कुंड है, जिसे यहां के निवासी 'हन्नेरडु चक्र' कहते हैं. ऐसी मान्यता है कि यह कुंड अथाह है और जो भी चीज इसमें गिरती है वह कुंड के 12 चक्कर काट कर भंवर में गोता खा जाती है. अर्कावती संगम से पांच कि.मी. आगे है सुप्रसिद्ध 'मेके दाटु'. इस नाम का हिंदी रूपांतर होगा – बकरी-कुदान. यहां कावेरी नदी दीवार जैसी सीधी दो चट्टानों के बीच से 18 मी. नीचे कूदती है. एक चट्टान जरा टूटी हुई है. मगर दोनों के बीच की दूरी बहुत कम है. स्थानीय लोगों का विश्वास है कि कोई भी चुस्त बकरी छलांग मार कर यहां नदी को पार कर सकती है.

मेके दाटु

मेके दाटु के बाद नदी दक्षिण को मुड़ती है और कर्नाटक के मैसूर-बेंगलूर जिलों तथा तमिलनाडु के धर्मपुरी जिले के

होगेनकल प्रपात
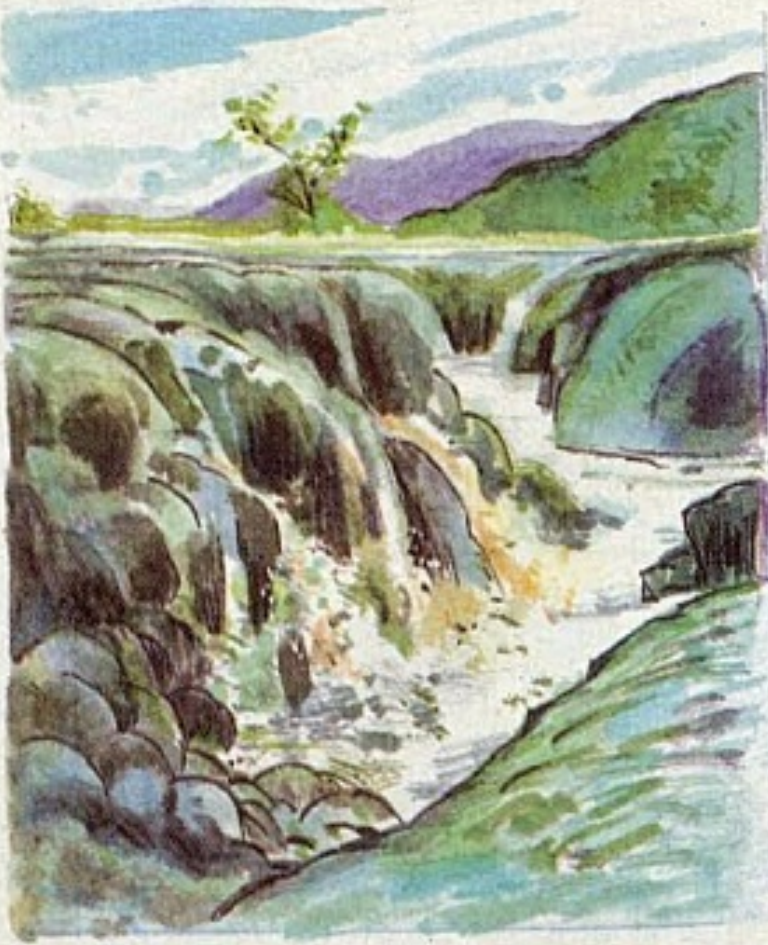
बीच सीमा बनाती हुई, मलगिरि पर्वतमाला के पहाड़ों व घाटियों में से उछलती-कूदती आगे बढ़ती है. 30 कि.मी. आगे तमिलनाडु की तोप्पूर पहाड़ियों में होगेनकल पर वह एक और विशाल प्रपात बनाती है. 'होगेनकल' का अर्थ है – धुंधुआती चट्टान. नदी यहां दो शाखाओं में बंट जाती है. पश्चिमी शाखा 22 मी. की ऊंचाई से गिरती है. नीचे चट्टानी पेंदी है, जिससे टकरा कर पानी फुहार के रूप ऊपर उछलता है और धुएं जैसे आस-पास फैल जाता है. पूर्वी शाखा की दो धाराएं हैं. उनमें से एक धारा मेके दाटु जैसी तंग घाटी में से गुजरती है. यह स्थान *ज्ञानतीर्थ* कहलाता है और यहां स्नान करना शुभ माना जाता है. यात्रियों की सुरक्षा के लिए यहां जंगले बनाये गये हैं, और जंजीरें लगायी गयी हैं. *आडि पदिनाट्टु* यानी अगस्त के 18 वें दिन तथा *ऐपासि* महीने (अक्टूबर-नवंबर) की पूर्णिमा पर यहां स्नान का मेला भरता है. *ऐपासि* का त्योहार तमाम तमिलभाषियों में बहुत लोकप्रिय है. इस दिन लोग परिवार-समेत पूरे दिन नदीतटों पर पिकनिक मनाते हैं. नदी में स्नान और नदी की पूजा इस उत्सव के विशेष अंग हैं. भोजन में तरह-तरह के भात – नीबू-भात, इमली-भात, नारियल-भात और दही-भात आदि – खाये जाते हैं.

घाट के ऊपर देशेश्वर का मंदिर है. ऐसी मान्यता है कि कावेरी से घनिष्ठ संबंध रखनेवाले महर्षि अगस्त्य ने यहां पर पूजा की थी.

होगेनकल में नदी को पार करने या प्रपात को निहारने के लिए *हरिगोलु* का उपयोग किया जाता है. यह बेंत की बनी गोलाकार चपटी टोकरी होती है, जिसकी पेंदी में तिरपाल मढ़ा होता है. इसमें एक समय में सात यात्री बैठ सकते हैं. पर्यटकों के झुंडों को मामूली-से किराये पर पार उतारने के लिए वहां भारी संख्या में हरिगोलु मौजूद रहते हैं. नाविक छोटे-से चप्पू की मदद से हरिगोलु को नदी की धार में सफाई से चलाते हैं.

नटनी की लम्बा-कूद

हरिगोलु

सचमुच यह चतुराई का काम है, क्योंकि नदी का पाट यहां तंग है और बहाव बहुत तेज. नदी के एक तरफ ऊंचा चट्टानी कगार है तो दूसरी ओर वनों से ढके पहाड़ हैं.

प्रपात के ठीक नीचे चिन्नार नाम की एक छोटी नदी आ कर कावेरी से मिलती है. चिन्नार का दूसरा नाम *सनत्कुमार नदी* है. वह जिस कुंड में से निकलती हैं उसे महर्षि सनत्कुमार ने खोदा था, ऐसी मान्यता है.

एक लोककथा यहां सुनने को मिलती है. एक दिन इस्वल नायक नाम का कबाइली सरदार नदी के दायें तट पर झूले पर बैठा झूल रहा था. दूसरे तट पर एक कमउम्र नटनी लग्गे पर अपने करतब दिखा रही थी. सरदार उसका खेल गौर से देख रहा था. एकाएक उसने नटनी को चुनौती दी कि तुम लग्गे के सहारे कूद कर इस किनारे आ जाओ तो हम मानें. फिर क्या था ! नटनी ने लग्गे के सहारे छलांग मारी और सीधे आ कर इस्वल नायक की गोद में धप्प-से गिरी. जब मैसूर के राजा को इस घटना का पता चला तो वह बहुत नाराज हुआ कि उस पवित्र तीर्थस्थान में ऐसा बेहूदा खिलवाड़ किया गया. उसने इस्वल नायक को सख्त सजा दी, जिससे और कोई सरदार फिर वैसी हरकत न करे.

होगेनकल में मछली पकड़ने का भी अपना आनंद है. यहां नदी में *माहशीर* किस्म की मछली मिलती है. माहशीर विशाल मछली होती है – कोई-कोई तो 50 कि.ग्रा. की ! किसी समय यहां ये मछलियां बड़े-बड़े झुंडों में तैरती मिलती थीं. किंतु प्रदूषण के कारण अब उनकी तादाद घट गयी है.

कावेरी की माहशीर मछली

अब कावेरी दक्षिण की ओर उतरती है और चौड़ी हो जाती है. होगेनकल से 50 कि.मी. आगे जहां वह तमिलनाडु में प्रवेश करती है, ठीक वहां उस पर मेट्टूर बांध बांधा गया है. प्रतिभाशाली अंग्रेज इंजीनियर आर्थर कॉटन ने 1834 में ही इसकी कल्पना की थी. किंतु उसके सपने ने ठोस योजना का रूप ग्रहण किया 1910 में. निर्माणकार्य तो और भी बाद में, 1925 में आरंभ हुआ. पर अगले छह वर्षों में ही बांध बनकर तैयार हो गया, जोकि एक कीर्तिमान है. इसके लिए बिजली मैसूर राज्य ने मुहैया की थी.

मेट्टूर बांध 1,590 मीटर लंबा, 51 मी. चौड़ा और 64.2 मीटर ऊंचा है.
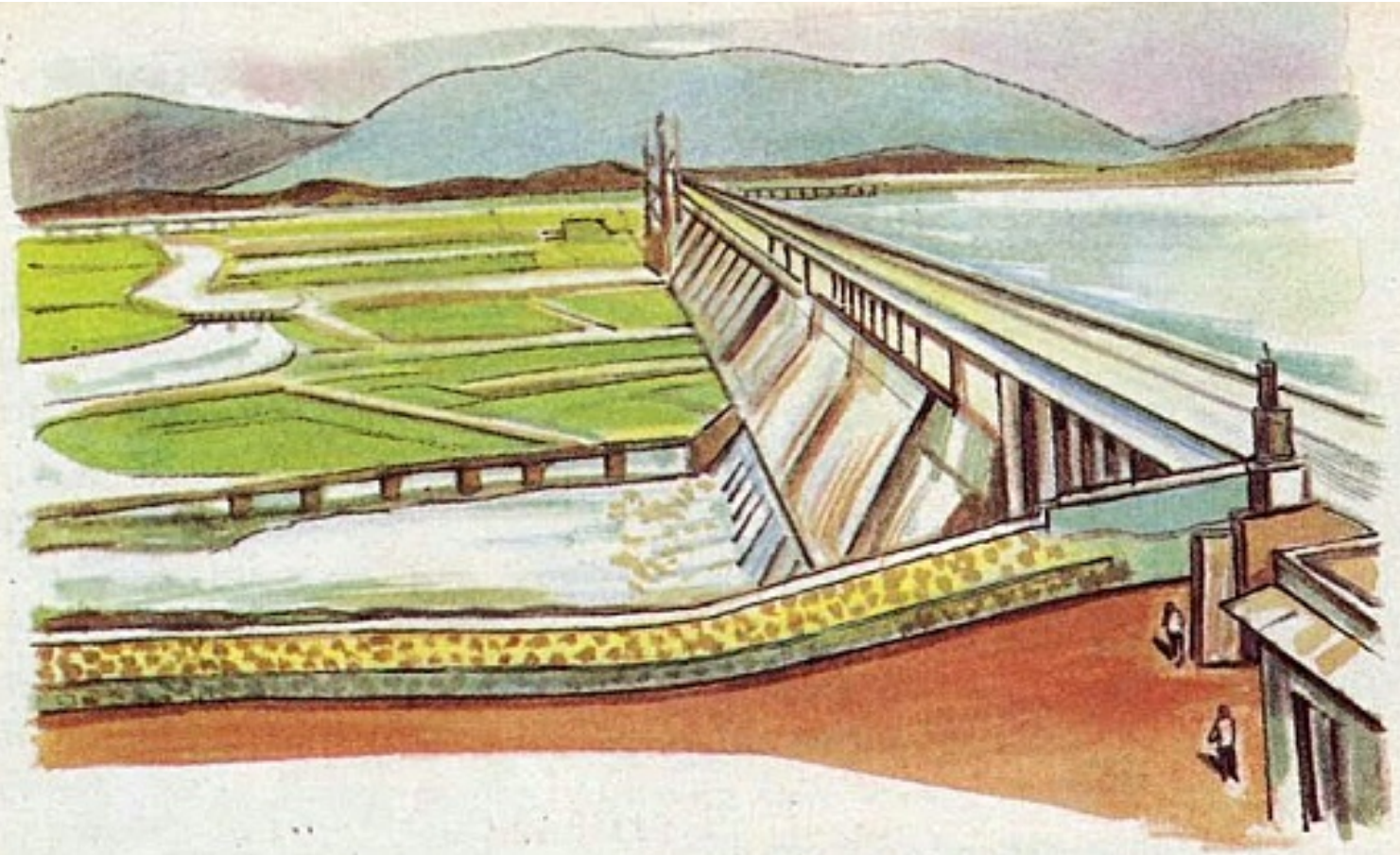
मेट्टूर बांध

जब इसका निर्माण हुआ, तब यह विश्व का सबसे विशाल पक्का बांध था और इससे निर्मित 60 वर्ग कि.मी. के जलाशय की गिनती संसार के विशालतम मानवनिर्मित जलाशयों में होती थी. गवर्नर सर जॉन स्टैनली के नाम पर इसका नाम *स्टैनली जलाशय* रखा गया. बांध के नीचे बना हुआ बिजली-केंद्र 36,000 किलोवाट बिजली का उत्पादन करता है.

सूखे के वर्षों में बांध में पानी की गहराई 8-9 मी. ही रह जाती है, जैसा कि सन 1952 में हुआ था. सन 1975 में तो जलाशय एकदम सूख गया था. तब पांड्य काल का एक मंदिर प्रकट हुआ था.

कावेरी यहां से सेलम और पेरियार जिलों के बीच सीमा बनाती हुई बहती है. उत्तर में शिवराय पहाड़ियों में से निकलकर सेलम शहर में से बहने वाली *तिरुमणिमुत्तार्* नदी नामक्कल में कावेरी में मिलती है. 'मुत्तार्' तमिल में मोतियों को कहते हैं. शायद कभी इस नदी के पाट में मोती मिला करते थे. ऐसी मान्यता है कि सेलम शहर के मुख्य शिवमंदिर में देवी के आभूषण में जड़ा हुआ विशाल चमकीला मोती तिरुमणिमुत्तार् नदी की ही देन है. पर आज नदी की बड़ी दुर्दशा है. जलकुंभी ने उसमें पानी का बहाव बंद कर दिया है. शहर की गंदगी और कल-कारखानों से निकले गंदे पानी ने नदीजल को भयंकर रूप से प्रदूषित कर दिया है. केवल बरसात के दिनों में नदी में पानी बहता नजर आता है – वह भी मटमैला और गंदा.

सेलम बुनाई और स्टेनलेस स्टील के उद्योगों के लिए मशहूर है. यहां बुनी गयी चादरों और ज़री की किनारीवाली धोतियों की मांग सारे दक्षिण भारत में है. सेलम शहर के अंगरक्षक की तरह खड़ी शिवराय पहाड़ियों में रमणीय पर्यटन-स्थल येर्काड स्थित है. गरमियों में जब नीचे के मैदान भट्ठी की तरह तप रहे होते हैं, तब येर्काड में गरम कपड़ों की जरूरत पड़ती है !

तीन यक्षिणियाँ - तीन वरदान

राम और राजा न केवल एक ही गाँव के निवासी थे, बल्कि दोनों एक दूसरे के पड़ोसी भी थे।

राम बहुत परिश्रमी था। वह तन-मन से अपने खेतों की देख भाल करता। फलस्वरूप, अच्छी फसल हो जाती थी। खाने-पीने से जो अनाज बच जाता, उसे बेच कर उसने एक छोटा-सा खपरैल घर भी बनवा लिया। वह किफायतदारी से खर्च करता और अपने सरल जीवन से संतुष्ट रहता था।

राजा उससे अलग था। वह एक ओर परिश्रम से कतराता था, तो दूसरी ओर आडम्बर पर बहुत खर्च करता था। परिणाम स्वरूप उसे कर्ज लेना पड़ा; यहाँ तक कि उसे अपना खेत भी बेच देना पड़ा। उसकी बूढ़ी माँ हमेशा बीमार रहती थी। उसकी पत्नी उसे सदा कोसती रहती थी और बात-बात पर ताना देती रहती थी। इस प्रकार राजा का जीवन बहुत दुखी और अस्तव्यस्त था। इसका परिवार राम के परिवार से जलता था, जबकि राम और उसकी पत्नी के मन में राजा के परिवार के लिए कोई दुर्भावना नहीं थी।

राम और राजा महीने में एक बार एक साथ ही शहर हो आते थे और महीने भर की आवश्यक चीजें खरीद कर ले आते थे। दोनों जंगल से गुजरने वाले छोटे रास्ते से ही जाते और उसी रास्ते से वापस भी लौटते।

एक दिन वे दोनों शहर से अपनी-अपनी थैली में चीजें लिए जंगल से होकर लौट रहे थे। मार्ग में बातचीत करते हुए राम ने चिंता व्यक्त करते हुए राजा से कहा, हमारे देश की रानी की हाल में हुई मौत से राजा शोकग्रस्त हैं। ऐसे संकट की घड़ी में पड़ोसी राजा ने अचानक युद्ध की घोषणा कर दी है। हमारे राजा इस बात से चिंतित हो गये हैं कि

अवधानी के.

हमारे गाँव पर इन्द्रदेव इतने क्यों कुपित हैं कि दो वर्षों से कहीं काले बादल दिखाई नहीं देते।''

राजा ने राम की इस बात को भी गंभीरतापूर्वक नहीं लिया और बड़ी बेरुखी से कहा,-''तेरे पास अपना खेत है, इसलिए वर्षा के लिए तुम परेशान हो। मेरा क्या, यहाँ वर्षा नहीं हुई तो कहीं और जाकर किसी का खेत जोत लेंगे।''

जब वे दोनों जंगल की पगडंडी से गुजर रहे थे, तब राजा के एक रिश्तेदार ने उसे पैदल जाते हुए देखा। वह गाड़ी से सफर कर रहा था। उसने राजा को आवाज देते हुए कहा,-'गाड़ी में एक सीट खाली है, जल्दी आ जाओ।' 'बुरा न मानना' राम को यह कहते हुए राजा गाड़ी में बैठ कर चला गया।

राम अकेला ही जंगल से गुजर रहा था। तभी रास्ते पर टूट कर गिरी पेड़ की एक शाखा से वह अचानक टकरा कर औंधे मुँह गिर पड़ा और अचेत हो गया। उसकी थैली की चीजें जमीन पर बिखर गईं। जब उसे होश आया तब गोधूलि का समय हो रहा था। उसने अपनी बिखरी हुई चीजें एकत्र करके थैली में डाल लीं। तभी उसे वहीं पर तांबे की बहुत पुराने जमाने की एक अंगूठी मिल गई। उसने वह अंगूठी अपनी एक उंगली में पहन ली। और घर की ओर चल पड़ा।

अचानक उसकी दृष्टि सामने के दो वृक्ष-गुच्छों के बीचोंबीच एक देदीप्यमान भव्य इमारत पर पड़ी। वह इस मार्ग से परिचित था और इस जंगल में वृक्षों के अतिरिक्त कभी उसने कोई इमारत नहीं देखी थी। इस अद्‌भुत दृश्य को देख कर वह अवाक् रह गया। वह समझ नहीं सका कि यह चमत्कार

युद्ध की तैयारी न होने के कारण कहीं हार न जायें।

इस पर राजा ने हँसते हुए लापरवाही से कहा,''राजसिंहासन पर कोई भी राजा बैठे, हमें क्या लेना-देना। हमें तो हर हालत में अपनी थैली खुद ही ढोनी पड़ेगी और जंगल के रास्ते से पाँव घसीटते गाँव जाना पड़ेगा। इस काम से हमें कोई राजा मुक्ति नहीं दिला सकता।''

राम ने राजा की बात का कोई उत्तर नहीं दिया और चुपचाप चलता रहा।

यद्यपि श्रावण का महीना था, फिर भी आसमान में बादलों का नाम-निशान नहीं। दिन का तीसरा पहर था, लेकिन धूप में बहुत गर्मी थी। राम ने पुनः बात छेड़ते हुए राजा से कहा,-''चलो, तुम्हें देश की कोई चिन्ता नहीं है, पर यह तो बताओ कि

कैसे हुआ। उसने अपने सिर से गठरी उतार कर नीचे रख दी और खड़ा होकर एकटक उसी दमकते भवन को देखता रहा। तभी उसने अंगूठी वाली उंगली में दर्द महसूस किया। उसने पहली उंगली से उसे निकाल कर दूसरी उंगली में डाल ली। और फिर भवन को देखने के लिए जैसे ही उसने नजर उठाई तो वह भव्य भवन अब दिखाई नहीं पड़ा। उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा।

दूसरी उंगली में अंगूठी बदलने से तो कहीं वह भवन अदृश्य हो गया, यह सोच अंगूठी को पहली उंगली में फिर से धारण कर लिया। सचमुच अब फिर से वही देदीप्यमान भवन प्रकट हो गया।

अब उसे विश्वास हो गया कि अमुक उंगली में अंगूठी धारण करने पर ही यह भवन प्रकट होता है। अब उसके मन में उस भव्य भवन के अन्दर जाकर देखने की इच्छा पैदा हुई। उसने सोचा कि जो भवन बाहर से इतना अद्‌भुत है, वह अन्दर से तो और भी दिव्य होगा। इसलिए वह सावधानी से डरते-डरते भवन के मुख्य द्वार से अन्दर पहुँचा।

सामने के कक्ष में तीन अति सुन्दर यक्ष-बालाएँ हँसती हुई आपस में बातें कर रही थीं। अपने कक्ष की ओर एक मानव को आते देख कर उन्हें आश्चर्य हुआ। उन्होंने उसे रोकते हुए पूछा,-''तुम कौन हो और क्या चाहते हो?''

राम ने अपना परिचय देते हुए कहा कि मैं इस अद्‌भुत भवन की बाहरी भव्यता से आकर्षित होकर इसके भीतरी भाग की शान-शौकत देखने के ख्याल से यहाँ चला आया हूँ।

''इसमें मानवों का प्रवेश निषिद्ध है। तुम यहाँ से लौट जाओ। इसके और आगे बढ़ोगे तो तुम्हारे प्राणों का खतरा है।'' एक यक्ष-बाला ने कहा।

''तुम यहाँ से लौट जाओ तो हम तीनों तुम्हें एक-एक बरदान देंगी।'' दूसरी यक्षिणी ने कहा।

''हमलोगों के नाम उदया, संध्या और निशा हैं। हममें से हरेक नाम का सात बार जाप करके जो भी मांगोगे, पूरा हो जायेगा।'' तीसरी यक्ष-कन्या ने कहा।

राम ने उदया का सात बार नाम लेकर कहा,-''हमारे देश पर जिस शत्रु राजा ने आक्रमण की घोषणा की है, उसका मन परिवर्तित हो जाये और हमारे राजा से सन्धि कर ले।''

समाचार सुनो, शत्रु राजा ने सन्धि कर ली है। अब युद्ध नहीं होगा।''

राम को यह खबर सुनकर बड़ी राहत मिली। उसने प्रसन्न मुद्रा में घर की दहलीज पर जैसे ही कदम रखा, वैसे ही बिना गर्जन-तर्जन के बर्षा शुरू हो गई। उसने घर पहुँचते ही अपनी पत्नी को अद्भुत अंगूठी के चमत्कार का किस्सा सुनाया और कहा कि शत्रु राजा के साथ सन्धि और यह बर्षा इसी अंगूठी के प्रताप का फल है। इस दिब्य अंगूठी को बड़े आदर और पूजा-भाव से रखो। यह कहते हुए राम ने बह अंगूठी अपनी उंगली से निकाल कर पत्नी को दे दिया। पत्नी ने उसे आदर के साथ सिर से लगाया और पूजा घर में रख दिया।

राम की आवाज सुनते ही राजा यह जानने के लिए उसके घर आ रहा था कि उसे गाँव पहुँचने में पूरी रात कैसे लग गई। लेकिन अंगूठी के बारे में राम की बातचीत सुन कर बह खिड़की पर से ही लौट गया और सारी बात अपनी पत्नी को बता कर बोला,-''किसी प्रकार बह महिमामयी अंगूठी चोरी से उसके घर से ले आओ तो मैं भी उन यक्षिणियों से माँग कर तीन बरदान ले आऊँगा।''

''एक बरदान मेरे लिए भी माँग लेना बेटा। मैं कितने दिनों से खाट पकड़े कराह रही हूँ।'' आह करती हुई खाट पर पड़ी-पड़ी राजा की माँ ने कहा।

''मेरे लिए भी एक घर, एक अच्छा-सा घर माँग लेना।'' पत्नी ने कहा।

''ठीक है, ठीक है; पहले वह अंगूठी तो लाओ।'' राजा ने पत्नी से कहा। राजा की पत्नी ने अपने

फिर उसने सन्ध्या का सात बार नाम लेकर कहा,-''हमारे गाँव में न ही अतिवृष्टि हो और न सूखा पड़े और हमारा गाँव हमेशा खुशहाल और हरा भरा रहे।''

निशा का नाम लेकर उसने कहा,--''परिश्रम से जितना मुझे मिले, मेरा परिवार उसी में सुखी और सन्तुष्ट रहे।''

तीनों यक्षिणियाँ राम की देशभक्ति, जन्म भूमि के प्रति उसके प्रेम और अपने व्यक्तिगत जीवन में सचाई और सादगी से जीने के उसके आदर्शों से बहुत प्रभावित हुईं। उनसे बिदा लेकर प्रातः काल होते-होते वह अपने गाँव पहुँचा।

अपने गाँव की सीमा में वह जैसे ही घुसा कि राजा का एक ढोलिया ढोल बजा कर गाँव को सूचित कर रहा था,-''सुनो भाई सुनो, खुशी का

पिछवाड़े से दो-चार फूल तोड़े और फूल देने के बहाने राम के घर गई।

उस समय राम अपने पिछवाड़े में कुएं पर स्नान कर रहा था। उसकी पत्नी रसोई में व्यस्त हो गई।

राजा की पत्नी ने आवाज देते हुए कहा,-''बहन, आज शुक्रवार है, इसलिए तुम्हारे पूजा घर के लिए फूल लाई हूँ।''

''अच्छा। पूजा घर में रख दो। मैं उनके लिए रसोई बना रही हूँ।'' रसोईघर से ही राम की पत्नी ने ऊँची आवाज में कहा। राजा की पत्नी ने पूजा घर में फूल रख कर अंगूठी छिपा ली और जल्दी अपने घर में चली गई।

राजा ने ठीक वैसा ही किया जैसा कि उसने राम से सुना था। उसे भी उसी स्थान पर वैसा ही भवन दिखाई पड़ा। उस भवन के अन्दर जाने पर उसे भी तीन यक्ष-बालाएँ मिलीं जिन्होंने राजा से वही प्रश्न किया जो राम से किया था।

''मैं तीन बरदान माँगने आया हूँ।'' उत्तर में राजा ने कहा। यक्षिणियाँ राजा की मनोबृति और बातचीत से सचाई भाँप गईं। तब उनमें से एक ने कहा,-''हम सब तुम्हें वरदान दे देंगी, किन्तु ताम्बे की अंगूठी हमें वापस कर दो।''

''किन्तु हम अपने घर पर माँ और पत्नी के साथ मिल कर वरदान लेना चाहते हैं। वरदान लेने की प्रक्रिया वही है न कि आप तीनों के नाम सात-सात बार लेकर वरदान मांगें। आप बस यही बता दें। अंगूठी हम अवश्य वापस कर देंगे।''

''हाँ हाँ यही।'' तीनों ने एक साथ तनिक खिन्न स्वर में कहा।

''बस, जिस काम से आया था वह पूरा हो गया।'' इतना कह कर उसने यक्षिणियों को अंगूठी वापस कर दी। अंगूठी उन्हें देते ही यक्षिणियों के साथ वह भवन अदृश्य हो गया। फिर भी राजा खुश था, क्योंकि उसे बरदान लेने की प्रक्रिया को स्वयं यक्ष कन्याओं ने भी अनुमोदित किया था। अब वे रहें या न रहें, उसे परवाह नहीं थी।

वह बहुत प्रसन्न मुद्रा में घर की ओर चल पड़ा। उसके घर पर माँ और पत्नी बड़ी बेसब्री से उसका इंतजार कर रही थीं। घर पहुँच कर उसने सारी बातें दोनों को समझाईं। तीनों ने एक-एक कर एक-एक यक्षिणी का नाम लेकर सोचना शुरू किया कि क्या मांगें।

पहले माँ ने कहा कि मैं सौ साल जीऊँ। रात-दिन बीमार रहने वाली सास की सेवा करते-करते

युवावस्था में जो कामनाओं से मुक्त है, केवल उसी का मन शान्त है। प्राण-शक्ति के क्षीण हो जाने पर(बुढ़ापे में) किसका मन शान्त नहीं हो जाता?

-पंचतंत्र

बहू तंग आ गई थी। इसलिए उसने सास से कहा कि सौ साल तक बीमारी क्यों पालना चाहती हो। कहो कि जब तक जीवित रहूँ, स्वस्थ रहूँ, चलती-फिरती रहूँ।

बस, यह कहते ही सास स्वस्थ होकर खड़ी हो गई। पत्नी पछताती हुई बोली,-''हाय, यह क्या कर दिया। मैं तो महल, नौकर-चाकर, सोना-चाँदी आठो ऐश्वर्य मांगना चाहती थी पर बुढ़िया की स्वस्थ जिन्दगी मांग कर अपना वरदान खो दिया। हाय! लुट गई।'' अपनी तन्दुरुस्त माँ को देख कर राजा बहुत खुश हुआ लेकिन अपनी पत्नी को चिढ़ते देख उस पर नाराज होकर बोला,-''मेरी स्वस्थ माँ को देख कर क्यों चिढ़ती हो? इससे क्या हमारे घर पर आसमान टूट पड़ेगा? हमारा पड़ोसी राम यदि करोड़पति बन जाये तो सारी जिन्दगी रोती-बिलखती रहोगी?''

राजा की बात खत्म होते ही घर की खपरैल छत चरमराने लगी और भूकम्प के समान उसका सारा घर डगमगाने लगा। वे सब डर कर जान बचाने के लिए घर से बाहर गली में चले गये। देखते-देखते उनका घर खंडहर में बदल गया।

लेकिन राम के घर के स्थान पर कई मंजिलों का आलीशान महल खड़ा हो गया। हीरे-मोती के आभूषणों से घर भर गया। अशर्फियों के ढेर लग गये। राजा की पत्नी ईर्ष्या से जलभुनकर जार-जार रोने लगी।

स्वार्थ, घृणा और ईर्ष्यावश राजा, राजा की माँ और उसकी पत्नी ने झल्ला कर जो कुछ कहे, वे यक्षिणियों के वरदान न बन कर, इनके लिए शाप बन गये। दूसरों की दुर्गति देखने की आकांक्षा रखने वालों की यही दुर्गति होती है, शायद राजा ने यह महसूस किया होगा। और फिर से एक नई जिन्दगी शुरू करने के लिए परिवार के साथ किसी दूर के गाँव में चला गया।

परशुराम के हितबोध के बाद कण्व मुनि ने भी दुर्योधन को बहुत समझाया। उन्होंने कहा, - दुर्योधन, धर्मराज से संधि करना सब प्रकार से तुम्हारे हित में है। इससे तुम्हारी ही शक्ति बढ़ेगी और तुम दोनों मिलकर समस्त पृथ्वी पर निष्कंटक राज्य कर सकोगे। तुम्हारा यह मानना कि तुम्हीं एक मात्र शक्तिशाली हो तुम्हारी भूल है। उसे स्पष्ट करने के लिए मैं तुम्हें मातलि की कथा सुना देता हूँ।

देवेन्द्र के सारथि मातलि की कन्या गुणकेशि अपूर्व सुन्दरी थी। उसकी सुन्दरता के योग्य वर पृथ्वी और देवलोक में कहीं नहीं मिले। मार्ग में मिला तब मातलि अपनी पुत्री को लेकर नाग लोक में गये। मार्ग में मातलि की भेंट नारद से हो गई।

वरुण देव ने दोनों का स्वागत-सत्कार करने के बाद मातलि का प्रयोजन जान कर उन्हें नागलोक में भ्रमण करने की अनुमति दे दी। बहुत घूमने के बाद भोगवती पुर के एक अति सुन्दर युवक को मातलि ने अपनी बेटी के लिए पसन्द किया। उसका नाम सुमुख था।

''यह युवक गुणकेशि के लिए सर्वथा योग्य वर है। अत: विवाह के लिए इसे किसी प्रकार मनाइए।'' मातलि ने नारद से अनुरोध किया।

नारद ने सुमुख के नाना आर्यक से मातलि का परिचय कराया और उसकी इच्छा व्यक्त की। आर्यक को यह जान कर प्रसन्नता हुई किन्तु उसने अपनी विवशता प्रकट करते हुए कहा, -

''ऋषिवर! अभी हाल में गरुड़ ने मेरे पुत्र को मार डाला और मेरे पोते सुमुख को भी अगले महीने खा जाने की धमकी दी है। हमलोग इससे भयभीत हैं। इसलिए विवाह के लिए स्वीकृति कैसे दूँ?''

यह सुन कर मातलि चिंता में पड़ गया। फिर कुछ सोच कर बोला, -''महाशय, आप अपने पोते सुमुख को मेरे और नारद के साथ देवेन्द्र के पास भेज दीजिए। हम लोग गरुड़ से निबट लेंगे और सुमुख को मौत के मुँह से बचा लेंगे। यह काम हम लोगों पर छोड़ दीजिए।''

आर्यक ने मातलि के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। मातलि और नारद सुमुख को लेकर देवेन्द्र के पास पहुँचे। उस समय देवेन्द्र विष्णु से बातचीत कर रहे थे। मातलि ने अपना वृतांत सुना कर अपनी इच्छा व्यक्त की। विष्णु ने मातलि की बात सुन कर इन्द्र से कहा, - ''सुमुख को अमृत पिला कर देवताओं के समान अमर बना दो। इससे मातलि और नारद की इच्छा पूरी हो जायेगी।''

लेकिन देवेन्द्र ऐसा करके गरुड़ के क्रोध का शिकार नहीं होना चाहते थे। इसलिए उन्होंने विष्णु से कहा, -''आप ही अपने हाथ से सुमुख को अमृत पान करा दें।''

तब विष्णु ने इन्द्र से फिर कहा, -''तुम तो सभी लोकों के अधिपति हो। तुम्हें किसका भय है? तुम्हीं निर्भय होकर यह काम कर दो।''

देवेन्द्र ने सुमुख को दीर्घायु तो बना दिया परन्तु अमृत नहीं दिया। फिर भी, गरुड़ का तात्कालिक भय न रहने के कारण सुमुख गुणकेशि से विवाह कर आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत करने लगा।

जब गरुड़ को सुमुख के दीर्घायु होने और उसके विवाह का संवाद मिला तो वह क्रोधित होकर इन्द्र के पास आकर बोला, -''तुमने मेरा आहार छीन कर मुझे अपमानित किया। मेरी शक्ति को जानते हुए भी तुमने यह दुस्साहस किया है। गरुड जब किसी को दंड देता है, तो अवश्य ही इसके पीछे कोई कारण होता है। मुझसे अनुमति लिऐ बिना तुमने यह काम किया। मैं इसे अक्षम्य अपराध मानता हूँ। मैं तुम्हें दंड देकर ही रहूँगा।''

विष्णु ने गरुड़ की गर्वोक्ति पर उसे फटकारते हुए कहा, -''तुम मेरे सामने ही अपने को इतना बढ़ा-चढ़ा कर बता रहे हो। शायद तुम्हें मेरा वाहन होने का बहुत गर्व है। लेकिन सच पूछो तो तुम मुझे नहीं ढोते, मैं ही तुझे ढोता हूँ। यदि तुम समझते हो कि तुम मेरा भार ढो सकते हो तो जरा मेरे बायें हाथ का भार सहना।''

इतना कह कर विष्णु ने अपना बायां हाथ गरुड़ की पीठ पर रख दिया। गरुड़ विष्णु के बायें हाथ के भार से दब कर नीचे गिर पड़ा और उसके प्राण निकलने लगे।

गरुड़ का अहंकार चूर-चूर हो गया। उन्होंने विष्णु से क्षमा माँगी और प्राण-दान के लिए प्रार्थना की।

कण्व ने दुर्योधन को यह कहानी सुना कर कहा, -''दुर्योधन, जब तुम पांडवों का सामना युद्ध क्षेत्र में करोगे तो तुम्हारी स्थिति भी अभिमानी गरुड़ के समान होगी। आज तुम्हारी रक्षा करने कृष्ण स्वयं तुम्हारे द्वार पर आया है। उसकी बात मान कर अपने और अपने कुल को सर्वनाश से बचा लो।''

दुर्योधन कण्व की बातों का उपहास-सा करता हुआ कर्ण की ओर देख कर मुस्कुराया और फिर कण्व से बोला, - ''मैं भली भाँति जानता हूँ कि मुझे क्या करना है और क्या नहीं करना है। मुझे किसी के परामर्श की आवश्यकता नहीं है।''

इसके बाद नारद ने दुर्योधन से कहा, - ''दुर्योधन, हित की बात बतानेवाले संसार में दुर्लभ होते हैं। अपना हठ छोड़ कर उनकी बातों पर ध्यान दो और अपने हित की रक्षा करो। हठ सर्वनाश का कारण बन जाता है। उदाहरण के लिए विश्वामित्र के शिष्य गालव की कथा सुन लो, जो तुम्हारे समान ही हठी था।

विद्या ग्रहण के पश्चात उसने अपने गुरु को गुरु-दक्षिणा देना चाहा। गुरु ने कहा कि मुझे गुरु-दक्षिणा नहीं चाहिए। पर वह अपने हठ पर अड़ा रहा।

तब विश्वामित्र ने अप्रसन्न होकर कहा, - ''यदि तुम गुरु-दक्षिणा देने का हठ कर ही रहे हो तो मुझे ऐसे आठ सौ श्वेत अश्व ला दो

जिनका एक-एक कान काला हो।''

गालव उनकी इस तरह की माँग पर हक्का-बक्का हो गया। उसके पास इसके लिए न अर्थ था और न ऐसे अश्वों के मिलने का स्थान ज्ञात था। उसने विष्णु भगवान का स्मरण किया।

तभी उसके सामने गरुड़ प्रकट हुआ और बोला, -''भगवान विष्णु ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है और आदेश दिया है कि मैं तुम्हें जहाँ तुम जाना चाहते हो वहाँ ले जाऊँ।''

गालव प्रसन्न होकर गरुड़ की पीठ पर बैठ गया और उसे पूरब दिशा में चलने का आदेश दिया। गरुड़ तीव्र वेग से उड़ने लगा।

'अपनी गति कम करो। तीव्र वेग के कारण मैं कुछ देख नहीं पा रहा हूँ। मुझे विशेष प्रकार के अश्वों की तलाश है।'' गालव ने गरुड़ से कहा।

इस पर गरुड़ वृषभ नामक पर्वत पर उतर गया जहाँ शांडिलि नाम की तपस्विनी ने उनका स्वागत किया।

गरुड़ ने गालव को सलाह देते हुए कहा, -''घोड़ों के लिए पहले तुम्हें धन की आवश्यकता है। तभी घोड़ों की व्यवस्था कर पाओगे। इसलिए कहो तो मैं तुम्हें अपने मित्र प्रतिष्ठानपुर के राजा ययाति के पास ले चलूँ। उनसे घोड़ों के लिए धन माँग लेना।'' गालव के कहने पर गरुड़ उसे ययाति के पास ले गया।

ययाति ने गालव की बात सुन कर कहा, -''मित्र, लेकिन अब मेरे पास धन रहा नहीं। इसलिए धन तो नहीं दे सकता। किन्तु अपनी पुत्री माधवी से तुम्हारा विवाह कर सकता हूँ। इसकी सहायता से तुम्हें घोड़े मिल जायेंगे।''

गालव ने माधवी को पत्नी के रूप में जब स्वीकार कर लिया तब गरुड़ ने कहा, -''अब इस कन्या की सहायता से घोड़ों का प्रबन्ध कर लेना। मैं वापस जाता हूँ।''

गालव तब माधवी को लेकर अयोध्या के राजा के पास पहुँचा और अपना बृतांत बताया। अयोध्या के राजा ने गालव को कहा, -''यह कन्या माधवी सर्वगुण सम्पन्न है। इसे मुझे दे दो और इसके बदले घोड़े ले जाओ। यों तो मेरे पास हजारों अश्व हैं, लेकिन जैसा तुम्हें चाहिए वैसा सिर्फ दो सौ अश्व हैं। उन्हें ले जाओ।''

माधवी ने गालव को सलाह दी कि इस प्रकार

मुझे अन्य राजाओं को सौंप कर शेष घोड़े प्राप्त कर लेना।

माधवी से राजा को एक पुत्र उत्पन्न होने के बाद राजा ने उसे गालव को वापस सौंप दिया। इसके बाद गालब काशी नरेश दिवोदास के गया। उसके पास भी एक काले कान बाले सफेद घोड़े केवल दो सौ थे। उसने भी माधवी को लेकर वे दो सौ घोड़े दे दिये और उससे एक पुत्र पैदा होने के बाद उसे भी गालव को वापस कर दिया।

इसी तरह गालव ने माधवी को सौंप कर भोजनगर के राजा उशीनर से भी वैसे ही दो सौ अश्व प्राप्त किये। दो सौ अश्व अब भी घट रहे थे। लेकिन गालव को मालूम नहीं था कि वे कहाँ मिलेंगे।

तभी अकस्मात उसकी भेंट पुन: गरुड़ से हो गई। उसने बताया कि शेष दो सौ अश्वों के लिए परेशान न हो, क्योंकि किसी लोक में भी अब और वैसे घोड़े नहीं हैं। इसलिए शेष घोड़ों के बदले विश्वामित्र को माधवी को सौंप दो।

गालव ने ऐसा ही किया।

नारद ने यह कहानी सुना कर दुर्योधन से कहा, -''इतना कष्ट उठा कर भी गालव अपना हठ पूरा न कर सका। अत: तुम भी अपना हठ त्याग दो और अपने हितैषियों की बात मान लो।''

जब दुर्योधन पर किसी के उपदेश का प्रभाव नहीं पड़ा तब निराश होकर धृतराष्ट्र ने श्रीकृष्ण से कहा, -''कृष्ण, जो कुछ हो रहा है, मैं उससे सहमत नहीं हूँ। मैं स्वयं पराधीन हूँ। दुर्योधन को

समझाना मेरे बश में नहीं है। तुम स्वयं प्रयास करके देख लो।''

तब श्रीकृष्ण ने दुर्योधन को सम्बोधित करके कहा, -''तुम्हारे जैसे पुरुष को ऐसा काम नहीं करना चाहिए जो दुष्ट व्यक्ति करते हैं। तुम स्वयं जानते हो कि क्या उचित है और क्या अनुचित है। युद्ध से सब का सर्वनाश होता है। पांडवों के पराक्रम को समझो। उनसे मिलकर रहने में सबको प्रसन्नता होगी।''

भीष्म और द्रोण ने श्रीकृष्ण की बातों का समर्थन किया।

बिदुर ने दुर्योधन से कहा, -''मुझे तुम्हारी चिंता नहीं है। मैं तो तुम्हारे माता-पिता गान्धारी और धृतराष्ट्र के भविष्य को लेकर चिंतित हूँ।

दे रहे हैं। पांडवों ने अपनी इच्छा से जुआ खेला और शर्त के अनुसार बनवास किया। इसमें मेरा क्या दोष है? पांडव हमसे क्यों युद्ध के लिए सन्नद्ध हैं? यदि वे युद्ध करेंगे तो क्षत्रिय धर्म के अनुसार हम भी पीछे नहीं रहेंगे। मैं पृथ्वी के राजाओं से तो क्या, युद्ध में इन्द्र से भी नहीं डरता। जब मैं राजनीति से अनजान था, पांडवों को राज्य दे दिया गया था। लेकिन अब मैं जब तक जीवित रहूँगा तब तक उन्हें आधा तो क्या, सुई की नोक के बराबर भी भूमि नहीं दूँगा। मुझे अब और उपदेश देने का प्रयास न करो।''

श्रीकृष्ण ने अन्तिम बार चेतावनी देते हुए दुर्योधन से कहा, -''तुम्हारी इच्छा के अनुसार ही तुम्हें वीर गति प्राप्त होगी। तुमने सब प्रकार से पांडवों के साथ छल-कपट किया है, उनके विरुद्ध षड्यंत्र रचा है और कहते हो कि कोई पाप नहीं किया। आज पांडवों को उनका आधा अधिकार देने में तुम्हें आपत्ति हो रही है। अपनी ही भलाई की बातों को अनसुनी कर रहे हो। कल वे पूरा राज्य तुमसे ले लेंगे।''

तुम्हें जन्म देने के कारण ही वे अनाथ बनते जा रहे हैं।''

धृतराष्ट्र ने एक बार फिर दुर्योधन को समझाने की कोशिश की और कहा, -''कृष्ण की मैत्री हमारे लिए हर दृष्टि से हितकारी है। ऐसे अवसर को हाथ से जाने देना बुद्धिमानी नहीं है।''

दुर्योधन को किसी की बात अच्छी नहीं लगी। उसने श्रीकृष्ण को सम्बोधित करते हुए कहा, - ''कृष्ण, सभी मुझ पर ही दोष मढ़ रहे हैं। तुम भी पांडवों का समर्थन कर रहे हो और उन्हीं का प्रतिनिधित्व कर रहे हो। तुमने दोनों पक्षों के बल-पराक्रम के बारे में भी नहीं सोचा। मैं यह नहीं समझ पा रहा हूँ कि मैंने ऐसा कौन-सा पाप कर दिया है कि सब के सब मुझे ही उपदेश

श्रीकृष्ण की बातों से दुर्योधन क्रोधित होकर सभा से उठकर चला गया। उसके पक्ष के राजा भी उसके पीछे - पीछे चले गये।

तब धृतराष्ट्र से श्रीकृष्ण ने कहा, -''महाराज, यदि अपने वंश को सर्वनाश से बचाना चाहते हैं तो दुर्योधन और उसके अन्धे अनुगामियों को बन्दी बना कर पांडवों के सुपुर्द कर दीजिए

और उनसे सन्धि कर लीजिए।''

श्रीकृष्ण की इन बातों से धृतराष्ट्र घबरा गये। उन्होंने गान्धारी द्वारा दुर्योधन को सन्धि प्रस्ताव स्वीकार कर लेने का सन्देश भेजा। परन्तु दुर्योधन पर इसका कोई असर न पड़ा।

जब दु:शासन को यह मालूम हुआ कि कृष्ण ने दुर्योधन और उसके मंत्रियों को बन्दी बनाकर पांडवों को सुपुर्द करने का प्रस्ताव रखा है तो उसने दुर्योधन से कहा कि क्यों न हम कृष्ण को ही यहाँ बन्दी बना लें। इससे निर्दन्त सर्प की भाँति पांडव शक्तिहीन हो जायेंगे।

सात्यिकी को जब इस षड्यंत्र की भनक मिली तो उसने कृत बर्मा को सावधान करके सभा में जाकर कृष्ण को यह सूचना दी कि उन्हें बन्दी बनाने की योजना बनाई जा रही है। उन्होंने धृतराष्ट्र और अन्य सभासदों को भी यह बात बता दी।

तब धृतराष्ट्र ने तुरन्त सभा में दुर्योधन को बुला भेजा और उसे इस षड्यंत्र के लिए डाँटा-फटकारा। विदुर ने भी दुर्योधन की भरी सभा में भर्त्सना की।

श्रीकृष्ण ने तब दुर्योधन से कहा, -''क्या तुम समझते हो कि मैं अकेला हूँ? मेरे साथ पांडव की सेना, अंधक के बृष्टि योद्धा, आदित्य, रुद्र, ऋषि सब आये हुए हैं।''

दूसरे ही क्षण सबने देखा कि श्रीकृष्ण के शरीर के देदीप्यमान हृदय केन्द्र से अग्नि की ज्वालाएँ निकल रही हैं। उनके माथे पर बुध, बक्षस्थल पर एकादश रुद्र, भुजाओं पर दिक्कपाल और मुख पर अग्नि विराजमान हैं।

इस अद्भुत और अलौकिक दृश्य को देख कर सबकी आँखें चकाचौंध हो गईं। वे आगे और कुछ देख न सके और उनकी आँखें बन्द हो गईं। श्रीकृष्ण ने द्रोण, भीष्म, विदुर और संजय को दिव्य दृष्टि प्रदान की जिससे वे इनके विश्व रूप का संदर्शन कर पायें।

धृतराष्ट्र ने सभा में खलबली जैसी स्थिति भाँप कर पूछा कि यह सब क्या हो रहा है।

श्रीकृष्ण ने तब धृतराष्ट्र को भी दिव्यदृष्टि प्रदान की।
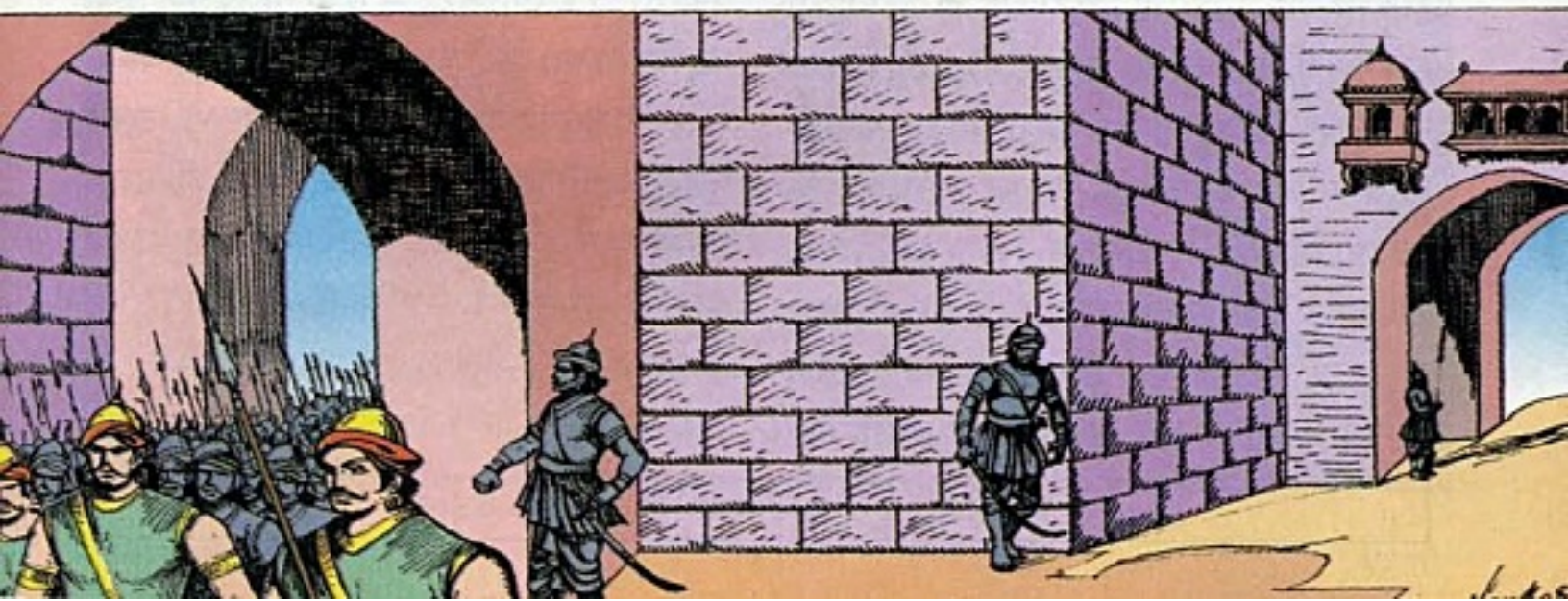
लकड़ी की तलवार

पतंग स्थानीय साहुकार के पास काम कर रहा था। उसके काम से साहुकार बहुत ही प्रसन्न था। वह कभी-कभी साहुकार की समस्याओं का परिष्कार- मार्ग भी ढूँढ़ता था। उस शहर में साहुकार के दो-तीन प्रतिद्वंद्वी भी थे, जो सदा उसे नीचा दिखाने के प्रयासों में लगे रहते थे, ऐसे आड़े वक्त पर पतंग की सलाहों ने अद्भूत काम कर दिखाया।

पर पतंग की दादी नहीं चाहती थी कि वह साहुकार के पास काम करे, वह हमेशा कहती रहती थी कि सरकारी नौकरी उन्नत है, वहाँ नौकरी के छूटने की संभावना नहीं है। उसने बारंबार उससे यह भी कहा कि साहुकार का क्या भरोसा। किसी दिन तुम्हारी सलाह का दुष्परिणाम हो और इससे उसे नष्ट पहुँचे तो शायद वह तुम्हें नौकरी से निकाल दे। तब जाकर दुखी होने से क्या फायदा। इसीलिए पतंग पर ज़ोर डालती रही कि वह तुरंत राजा के यहाँ नौकरी पाने की कोशिश मे लग जाए। विवश होकर वह राजा के यहँ लौकरी पाने निकल पड़ा।

पतंग राजा के पास सैनिक की नौकरी माँगने आया। देखने में वह किशोर-वय लगता था। इसलिए राजा ने उसे सैनिक की नौकरी न देकर राजमहल के एक द्वार पर रात का पहरेदार नियुक्त कर लिया।

राजा कभी-कभी पहरेदारों के काम का निरीक्षण स्वयं किया करते थे। एक रात जब वे निरीक्षण पर थे, तो उन्होंने पतंग को राजमहल के द्वार पर दीवार के सहारे सोते हुए पाया। राजा ने उसे जगाया नहीं बल्कि उसकी म्यान से तलवार निकाल ली।

जब पतंग की नींद खुली तो अपनी म्यान में तलवार नहीं देख कर वह घबरा गया। वह जानता था कि पहरेदार के लिए तलवार खो देना अक्षम्य अपराध है। इसके लिए उसे मृत्यु-दण्ड तक दिया जा सकता था। हर रोज प्रात:काल उसे आयुधागार में अपनी तलवार जमा करनी पड़ती थी और उसके पूर्व राजा के समक्ष सभी पहरेदारों के साथ हाजिर होना पड़ता था। इसलिए यह आवश्यक था कि सुबह तक वह कहीं से तलवार का इन्तजाम करे। अन्यथा वह नौकरी खो बैठेगा और साथ ही राजा के दिये दंड को उसे भुगतना होगा।

पच्चीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

पतंग को इस संकट में अपने बढ़ई दोस्त की याद आई। वह राजमहल के पास ही रहता था। वह भागा-भागा उसके पास गया और अपने संकट के बारे में बताया। बढ़ई मित्र ने कहा, - "मैं अधिक से अधिक लकड़ी की एक तलवार बना कर दे सकता हूँ जिससे एक दिन के लिए तो सँकट टल संकता है पर अन्त में राजा की दया से ही तुम्हारे प्राण बच सकते हैं।"

उसने सबेरा होने से पहले पतंग को लकड़ी की एक तलवार बना कर दे दी। उसकी बाहर से दीखने वाली मूठ सचमुच की तलवार की लगती थी।

प्रात:काल पतंग भी अन्य पहरेदारों के साथ राजा के निरीक्षण के लिए पंक्ति में खड़ा हुआ। थोड़ी देर के बाद राजा निरीक्षण के लिए पहुँचे।

प्राय: राजा पहरेदारों के निरीक्षण के लिए अकेला ही आया करते थे। लेकिन उस दिन साथ में कुछ सैनिकों की निगरानी में राजा के साथ एक कैदी भी लाया गया।

राजा ने कैदी को दिखाते हुए पहरेदारों से कहा, - "यह राजद्रोही है और उसे मौत की सज़ा दी गई है। मैं चाहता हूँ कि उसे तुम लोगों में से किसी के द्वारा मेरे सामने मौत की सज़ा दी जाये।"

यह कह कर राजा ने सभी पहरेदारों पर एक दृष्टि डाली। जैसे ही उनकी दृष्टि पतंग पर पड़ी, वहीं रुक गई।

"तुम अपनी तलवार से इस कैदी का सिर उसके धड़ से अलग कर दो।" राजा ने पतंग को आज्ञा दी, पतंग के हृदय की धड़कन जैसे रुक गई।

उसके पास लकड़ी की तलवार थी जिसे वह म्यान से बाहर निकाल भी नहीं सकता था, क्योंकि
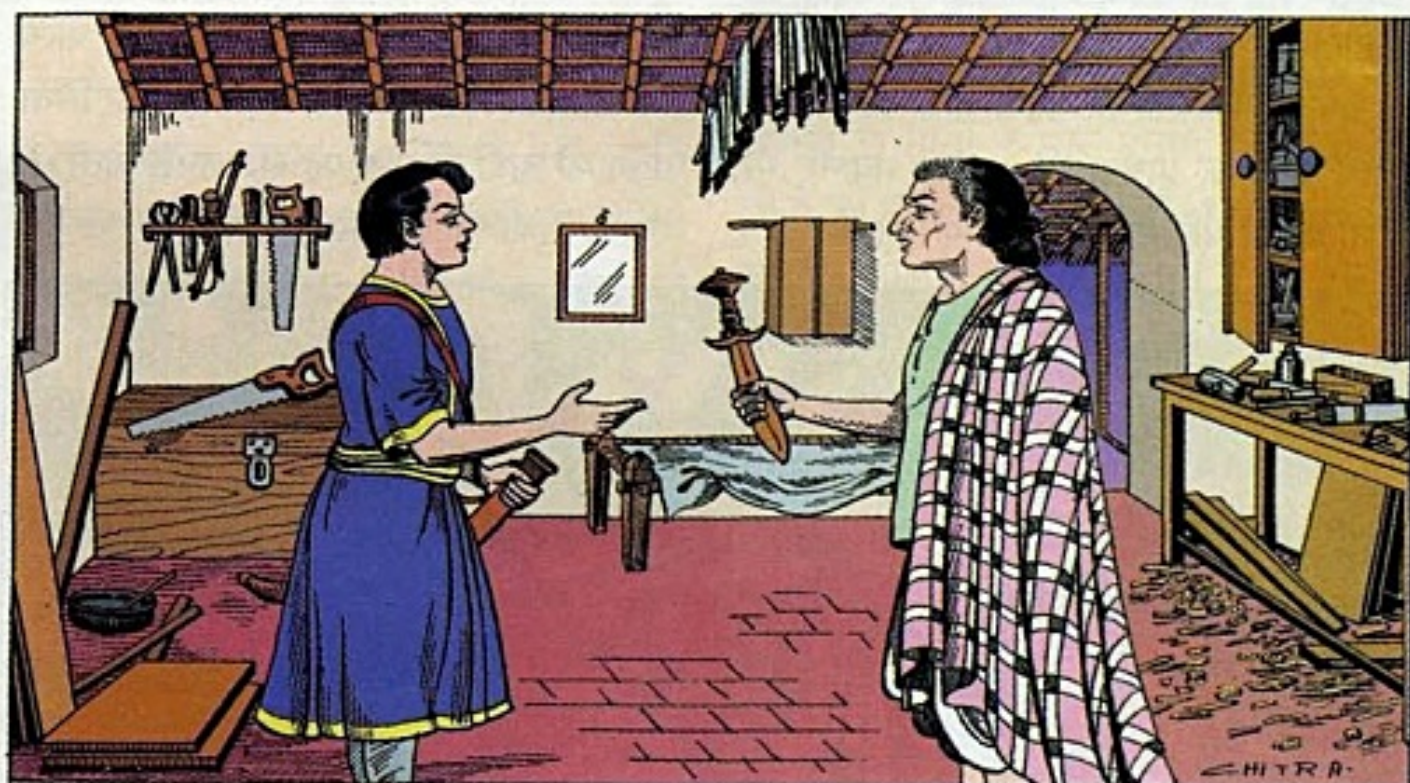
एक दुष्ट व्यक्ति शक्तिहीन होते हुए भी लोगों को क्षति पहुँचाने के लिए दूसरों को उकसाता है। पत्थर का टुकड़ा स्वयं किसी चीज़ को काटने में असमर्थ होते हुए भी तलवार की धार को तेज़ करता है।

-रत्न भण्डागारम

उसी समय राजा को उसकी तलवार की चोरी मालूम पड़ जाती और कैदी के स्थान पर मौत की सज़ा उसे स्वयं झेलनी पड़ती। उसे ऐसा लगा मानों राजा ने कैदी को नहीं बल्कि उसी को मौत की सज़ा सुनाई हो।

फिर भी उसने हिम्मत से काम लिया। उसने साहस बटोर कर कहा, -''महाराज! कृपा करके इस काम के लिए किसी और को आज्ञा दें। मुझसे निहत्थे कैदी पर हाथ उठाया नहीं जाता।''

''तुम मेरी आज्ञा की अवहेलना कर रहे हो। जानते हो, इसके लिए तुम्हें भी मौत की सजा मिल सकती है।'' राजा ने क्रोधित होकर कहा।

पतंग ने घबरा कर आँखें बन्द कर लीं और हाथ जोड़ कर प्रार्थना की, -''माँ भवानी, मेरी रक्षा करना। यदि मेरे हाथ से पाप होने जा रहा है तो मेरी तलवार को लकड़ी की तलवार बना दे और पाप से बचा ले।'' इतना कह कर उसने अपनी म्यान से झट तलवार निकाल ली। उसकी तलवार सचमुच लकड़ी की ही थी।

पहरेदारों को जहाँ एक ओर हँसी आ गई, वहीं दूसरी ओर आश्चर्य भी हुआ कि उसकी तलवार सचमुच में लकड़ी की कैसे बन गई।

राजा भी अपनी हँसी रोक न सके। पतंग ने आपत्ति से निबटने के लिए रात भर में न केवल लकड़ी की एक तलवार की व्यवस्था कर ली थी, बल्कि अपनी लाचारी को अनुकूल परिस्थिति में ढाल देने की हाजिरजवाबी भी दिखाई थी।

राजा ने न केवल उसे माफ कर दिया बल्कि उसे अपना निजी अंगरक्षक भी नियुक्त कर लिया। पतंग की दादी को जब यह खुशखबरी मिली तब उसकी खुशी का ठिकाना न रहा।

सपना या सच

राम, कृष्ण और भीम - एक ही गाँव के रहनेवाले इन तीनों युवकों की एक जैसी समस्या थी।

राम गौरी नाम की लड़की से विवाह करने को इच्छुक था, लेकिन इसकी गरीबी के कारण गौरी के माता-पिता ने शादी से इनकार कर दिया।

कृष्ण बुद्धिमान और सुन्दर युवक था और अपने मालिक गजपति की एकलौती बेटी से विवाह करना चाहता था। उसकी बेटी स्वाति भी कृष्ण से ही शादी करना चाहती थी। लेकिन गजपति की शर्त यह थी कि हर रोज एक सौ अशर्फियाँ कमा कर लानेवाले के साथ ही वह अपनी बेटी की शादी करेगा। कृष्ण के लिए यह कर पाना सम्भव नहीं था।

भीम कमला से प्रेम करता था और कमला भी भीम को चाहती थी। लेकिन कमला के माता-पिता अपने दामाद को घरजंवाई बनाना चाहते थे जो भीम के लिए संभव नहीं था। उसके माता-पिता वृद्ध थे और भीम के अतिरिक्त उनकी देखभाल करने वाला कोई न था।

एक दिन तीनों की, एक ही स्थान पर मुलाकात हो गई। तीनों ने अपनी-अपनी रामकहानी एक दूसरे को सुनाई। तीनों आपस में बहुत देर तक वार्तालाप के पश्चात इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि सब की समस्या का मूल धन का अभाव है। तीनों के पास पर्याप्त धन होता तो तीनों की इच्छाएँ पूरी हो जातीं। धन कमाने की तरकीब सोचते-सोचते अन्त में वे इस निर्णय पर पहुँचे कि धन कमाना उनकी अक्ल से बाहर है और उनके लिए असंभव है। इसलिए अन्त में तीनों ने आत्महत्या कर लेने का निश्चय किया।

एक रात वे गाँव के किनारे की पहाड़ी की चोटी पर खड़े हो गये और छलांग लगाने के पहले आँखें बन्द कर यह प्रार्थना करने

लगे,-" हे प्रभु! अगले जन्म में हमें धनवान बनाना।"

प्रार्थना के बाद वे छलांग लगाने ही जा रहे थे कि उन्हें चेतावनी भरी एक गंभीर आवाज सुनाई पड़ी, -"रुक जाओ, अन्यथा भयंकर परिणाम होंगे।"

पीछे मुड़ कर उन्होंने देखा कि एक महात्मा खड़े हैं। उन्होंने बिना कुछ पूछे कहा, -"जीवन भगवान का अनमोल बरदान है। इसे समस्या से डर कर यों अकस्मात खत्म कर देना पाप है। इससे समस्या का सामाधान नहीं होता बल्कि यह और उलझ जाती है। आत्म हत्या के बाद के जीवन में नरक की घोर यातना सहनी पड़ती है। उस यातना से तंग आकर पुन: आत्म हत्या करोगे और इससे भी बदतर जीवन पाओगे जो एक अन्तहीन नरक के समान होगा। जीवन की समस्याओं का समाधान जीवन में ही मिलेगा, मृत्यु में नहीं।"

महात्मा की बातों से वे पहले घबरा गये। लेकिन बाद में उन्हें शान्ति का अनुभव हुआ। उन्हें लगा कि बहुत बड़ा पाप करने से वे बच गये। लेकिन जीवन से निराश हो जाने के कारण उनमें जीने की कोई इच्छा नहीं रह गई थी। इसलिए उन्होंने महात्मा से कहा, -"महात्मा! आपने हमें मरने से बचाया है, लेकिन अब जीवन में हमारी कोई रुचि नहीं रही। अब आप ही बताइए कि हम सब क्या करें?"

"तुम सब अपनी ओर से मर चुके हो। इस जीवन पर अब तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है। परमात्मा ने तुम्हारी रक्षा की है। इसलिए शेष जीवन उन्हें समर्पित कर दो और उन्हीं के लिए जीओ। अपने जीवन का सारा भार, अपनी सारी समस्या परम प्रभु को निवेदित कर दो और अपने - अपने घर लौट जाओ। तुम सब का मंगल होगा।" यह कह कर महात्मा वहाँ से अदृश्य हो गये।

वे तीनों वहाँ से बिना सोचे -विचारे एक दिशा में चल पड़े। रास्ते में उन्हें एक हट्टा-कट्टा व्यक्ति मिला, जिसकी मूछें घनी थीं। उसने इन तीनों को बड़े गौर से देखा और उनकी कहानी सुनकर जोर से ठहाका लगाया।

''चलो मेरे साथ। जिन्दगी जीने का नया तरीका तुम सब को मैं सिखाऊँगा। जिन्दगी से जो चाहोगे, तुम्हें वह सब मिलेगा - धन-दौलत, नाम, स्त्री।''

वे तीनों उसके पीछे - पीछे चल पड़े।

अपने निवास पर ले जाकर मूँछ वाले ने उन्हें पीने को जल दिया। जल पीते ही वे तीनों अचेत हो गये मानो गाढ़ी निद्रा में सो रहे हों।

अचेतावस्था में राम ने सपना देखा कि वह राजकुमार बन गया है और गौरी से उसकी शादी हो गई है। उसका जीवन आनन्दमय है।

कृष्ण ने सपना देखा कि गजपति ने अपनी बेटी की शादी उससे करके उसे घरजंवाई बना लिया है। अब वह स्वयं घर का स्वामी बन गया है।

भीम ने सपना देखा कि कमला ने अपने माता-पिता से विरोध कर उससे शादी कर ली है और अपनी बेटी से भी अधिक सास - ससुर की सेवा में लगी रहती है।

जब उन्हें होश आया तो वे बहुत प्रसन्न थे। वे सन्तुष्ट और तृप्त अनुभव कर रहे थे। उन्हें लगा कि जैसे सचमुच उनकी इच्छाएँ पूरी हो गई हैं और उनके अनुभव वास्तविक हैं, काल्पनिक नहीं। तीनों ने अपने सपनों के अनुभव एक दूसरे को सुनाये।

तभी मूंछ वाले ने आकर कहा, —''मैंने तुम लोगों को मादक नाम की औषधि मिला कर पानी दिया था। इसीलिए तुम लोगों ने

ऐसे सपने देखे। यह औषधि मादक फूलों से बनाई जाती है। यहाँ ऐसे फूलों का एक बाग है। उसमें काम करने के लिए परिश्रमी युवकों की आवश्यकता है। यदि चाहो तो तुम सब वहाँ काम कर सकते हो। इसके बदले हरेक को हर माह एक लाख अशर्फियाँ मिलेंगी। साथ में, हर रोज यह औषधि भी पीने को मिलेगी।''

यह सुन कर तीनों की खुशी का ठिकाना न रहा। वे मादक फूलों के बाग में काम करने को राजी हो गये। मूंछ वाला उन्हें मादक फूलों के बाग में ले गया।

लेकिन अभी वे बाग में थोड़ी दूर ही गये होंगे कि एक काले नाग ने कृष्ण को डँस लिया।

''पास ही यहाँ एक महात्मा रहते हैं। इसे फौरन उसके पास ले जाओ। इसकी चिकित्सा कहीं और नहीं हो सकती।'' यह कर मूंछ वाले ने राम और भीम को महात्मा के आश्रम का मार्ग बता दिया किन्तु वह स्वयं उनके साथ नहीं गया।

महात्मा के पास ले जाते समय मार्ग में ही कृष्ण अचेत हो गया। राम और भीम को यह देख कर आश्चर्य हुआ कि आश्रम में वही महात्मा थे जिन्होंने उन तीनों को आत्म हत्या करने से रोका था। महात्मा को भी उन्हें अपनेआश्रम में देख कर आश्चर्य हुआ। उनहोंने पूछा-, ''बच्चो, तुमलोगों को अपने-अपने घर जाने के लिए कहा था। इधर फिर कैसे आ गये? लगता है, तुम सब पुन: मार्ग भटक गये हो।''

राम और भीम ने रात में महात्मा से विदा लेने के बाद की सारी घटना उन्हें सुना दी। महात्मा ने पहले कृष्ण को एक औषधि सुंघाई, जिससे वह होश में आकर उठ बैठा। फिर तीनों से कहा, -''तुम सब को यदि भूख लगी है तो बताओ क्या खाओगे? जिस चीज की इच्छा हो, स्पष्ट कह दो, चाहे वह कितनी ही दुर्लभ क्यों न हो।''

यह सुन कर तीनों ने एक दूसरे को देखा और फिर अपनी - अपनी रुचि का भोजन बता दिया। महात्मा ने तीनों के मस्तक को अपनी अंगुलियों से स्पर्श किया। अंगुलियों के स्पर्श होते ही राम, कृष्ण और भीम अचेत हो गये। अचेतावस्था में तीनों ने सपना देखा कि वे अपने मनपसन्द पकवान खा रहे हैं। खाना खा लेने के बाद उन्हें अपने आप ही होश आ गया।

होश में आने के बाद महात्मा ने तीनों को एक - एक अमरूद और केला देकर कहा, - ''अब एक-एक अमरुद और केला खा लो, क्योंकि मेरे पास इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। और यह बिताओ कि सच्ची तृप्ति तुमहें किससे मिली - सपने के मन पसन्द पकवान से या सचमुच के अमरुद और केले से।''

वे तीनों दो दो दिनों से भूखे थे। अमरूद और केला खाने से उनकी भूख शान्त हो गई, जबकि सपने के काल्पनिक पकवान से उनकी तृष्णा और बढ़ गई थी। उन तीनों को सपना और सच का फर्क स्पष्ट मालूम पड़ा।

राम ने महात्मा से कहा, -''महात्मा! भूख से तृप्ति

और भोजन का आनन्द तो इन सादे फलों से ही मिला। काल्पनिक पकवानों से तो भूख और बढ़ गई।''

''बिल्कुल ठीक। हमें भी यही अनुभव हुआ।'' कृष्ण और भीम ने कहा।

''ठीक ऐसे ही, सरल और वास्तविक जीवन में चाहे वह कितना ही सादा और साधारण क्यों न दिखाई पड़े, जीवन का सच्चा आनन्द छिपा है। मिथ्या संसार की कल्पना छला और धोखा है। वह रेगिस्तान में जल का आभास मात्र है, वास्तविक जल नहीं है। मृगतृष्णा है।

''जीवन से निराश होकर आत्महत्या करना और अवास्तविक और मिथ्या आनन्द के पीछे भागना - दोनों ही जीवन के सच्चे मार्ग से भटकना है। तुम तीनों दूसरी बार भी मार्ग से भटक गये हो। मिथ्या संसार की कल्पना के जाल में फँसानेवाले बहेलिए के हाथ में पड़ गये हो। तुम्हारे जैसे कितने ही निराश युवकों को मादक पदार्थों के व्यापारी मिथ्या लोक के अवास्तविक आकर्षणों का सब्ज बाग दिखा कर उन्हें अन्तहीन नरक यातना में ढकेल रहे हैं। तुम सब भी एक ऐसे ही मूंछवाले नरक-दूत के चंगुल में आ गये हो। एक नरक से निकल कर दूसरे अधिक भयंकर नरक के मार्ग पर चल पड़े हो।'' महात्मा ने उन्हें उपदेश देते हुए कहा।

तीनों ने एक दूसरे को देखा और एक स्वर से कहा, - ''महात्मा! आपने फिर हमें एक बार मौत से बचा लिया है। हम सचमुच दूसरी बार भी सच्चे मार्ग से भटक गये थे - आसमान से गिरे तो खजूर में अटके। हमारी आँखें अब खुल गई हैं। अब हमें समझ में आ गया है कि वास्तविक जिन्दगी की छोटी-सी खुशी भी झूठे स्वर्ग की बड़ी कल्पना से कहीं श्रेष्ठ है। परमात्मा ने हमें जितना दिया है, हम उतने में ही सन्तुष्ट रहेंगे और शेष जीवन को उन्हीं की धरोहर समझ कर उन्हीं की इच्छा के अनुसार जीयेंगे।''

''परम प्रभु अपने प्रिय बच्चों से ऐसे ही संकल्प की अपेक्षा करते हैं।'' महात्मा ने मुस्कुराते हुए कहा। ''प्रभु! इन्हें मार्ग दिखा।''

तीनों ने हाथ जोड़ कर महात्मा को प्रणाम किया और अपने घर की ओर चल पड़े। पूरब में लाली उतरने लगी थी और सवेरा होनेवाला था।

खोज करो! अभिव्यक्त

इस अंक में प्रकाशित प्रश्नावली के उत्तर अगले अंक में दिये जायेंगे। तब तक **'भारत की खोज प्रश्नोत्तरी, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडापलानि, चेन्नई-६०० ०२६'** के पते पर अपने उत्तर भेजने के लिए आप का स्वागत है।

किन्तु, इस प्रश्नोत्तरी-स्पर्द्धा में भाग लेने के लिए निम्नलिखित सर्जनात्मक कृति अनिवार्य है:

चन्दामामा के पिछले अंक में प्रकाशित (कुछ पृष्ठों के अधो भाग पर) सभी उद्धरणों और पूरक वाक्यों को पढ़िए और यह बताइए कि उनमें से सबसे अधिक आप को कौन-सा अच्छा लगा और क्यों। उद्धरण की पृष्ठ संख्या देते हुए लगभग सौ शब्दों में कारण बतायें। इसे अपने अध्यापक अथवा अभिभावक द्वारा प्रमाणित करा कर अपना नाम तथा हस्ताक्षर, उम्र, कक्षा और विद्यालय (यदि छात्र हैं) तथा अपना पूरा पता लिख कर उपरोक्त पते पर भेज दें।

प्रथम पुरस्कार : 1000 रु.
द्वितीय पुरस्कार : 500 रु.

तथा
पाँच बधाई पुरस्कार
प्रत्येक 200 रुपये

भारत की खोज प्रश्नोत्तरी : २

1

एक तूफ़ानी रात थी। आपाद मस्तक वर्षा और कीचड़ से लथपथ एक युवक ने नदी किनारे के एक घर के पिछले दरवाजे को खटखटाया। हाथ में दीपक लिये एक युवती ने द्वार खोला। "आह, स्वामी! इस भयानक रात में उमड़ती नदी को पार करके मेरे पिता के घर आने की क्या आवश्यकता थी?" उसने कहा।

"तुम्हारे बिना एक पल के लिए भी जीना उसह्य हो गया।" युवक ने उत्तर दिया।

"काश। मेरे प्रति प्रेम और आकर्ष का अर्धांश भी प्रभु के लिए हुआ होता!" आह भरती हुई वह बुदबुदाई।

उसी क्षण उस युवक के जीवन में बहुत बड़े परिवर्तन की प्रक्रिया प्रारंभ हो गई। वह भगवान की ओर मुड़ गया और कालक्रम में एक बहुत बड़ा संत हो गया।

यह घटना दो व्यक्तियों से सम्बन्ध रखती है। वे दोनों कौन हैं?

2

निम्नलिखित पौराणिक युगल चरित्रों में क्या सम्बन्ध है?

चन्दामामा : भाषा

करो! पुरस्कार लो!

१. आयुर्विज्ञान पर प्रथम भारतीय कृति कौन- सी है? इसके लेखक कौन है? ये किस काल में हुए?
२. शल्य-चिकित्सा पर प्रथम भारतीय कृति कौन-सी है? इसके लेखक कौन है? ये किस काल में हुए?
३. इतिहास पर प्रथम भारतीय कृति हौन-सी है? इसके लेखक कौन हैं? ये किस शताब्दी में हुए?
४. समाज शास्त्र, राजनीति-विज्ञान और विधि पर प्रथम भारतीय कृति कौन-सी है? इसके लेखक कौन हैं? ये किस काल में हुए?
५. नाट्य कला पर प्रथम भारतीय कृति कौन-सी है? इसके लेखक कौन हैं? ये किस काल में हुए?

मामा

शर्तें

१. चन्दामामा इंडिया लिं के कर्मचारी, उनके परिजन तथा सहयोगी इस प्रतियोग में भाग नहीं ले सकते।
२. निर्णायकों का निर्णय अन्तिम होगा और इस सम्बन्ध में कोई पत्राचार नहीं किया जायेगा।
३. अपठनीय प्रविष्टियों पर विचार नहीं किया जायेगा।
४. परिणामों की घोषणा चंदामामा के मई २००० अंक में की जायेगी।
५. उत्तर हमें २८ फरवरी तक मिल जाने जाहिए।

अ. अभिमन्यु - बलराम
ब. उग्रसेन - प्रद्युम्न
स. घटोत्कच - शिशुपाल
द. कीचक - परीक्षित
इ. कर्ण - सुभद्रा

अनेक : परम्परा एक
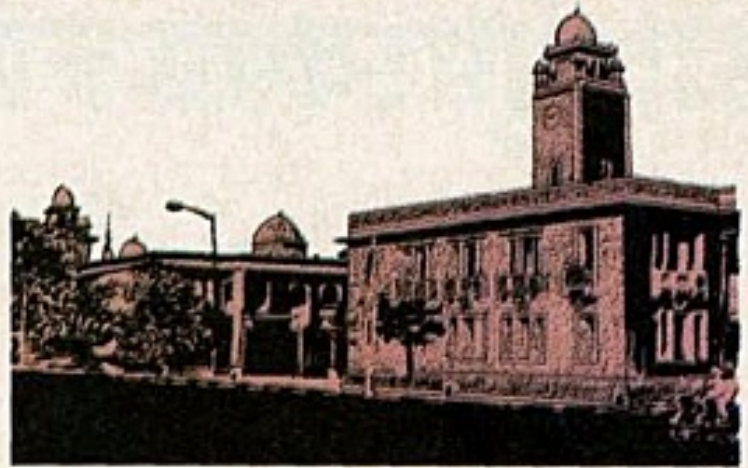
दक्षिण भारत के महानगर

तमिल नाडु की राजधानी के लिए चेन्नै का नाम व्यवहार में बहुत पहले से भले ही न हो, फिर भी यह विस्मृत प्राचीन नाम है। नगर को पहले मद्रास कहते थे और इसके पूर्व मद्रासपटनम्।

लेकिन इसका नाम चेन्नै और मद्रास कैसे पड़ा?

चेन्नै नाम सम्भवतः समुद्र किनारे बने एक प्राचीन मन्दिर के इष्टदेव चेन्नै केशवन से व्युत्पन्न है। इस मन्दिर को ईस्ट इंडिया कम्पनी ने उस स्थान पर क़िला बनवाने के लिए ध्वस्त कर दिया था। एक अन्य सिद्धान्त के अनुसार प्रांसिस डे ने यहाँ पर ब्रिटिश आबादी बसाने के लिए नायक दमराला

वेंकटप्पा से इस शर्त्त पर ज़मीन खरीदी थी कि इस स्थान को उसके पिता चेन्नप्पा नायक के नाम से प्रसिद्ध किया जायेगा। इसीलिए चेन्नप्पा से इसका नाम चेन्नै पड़ा।

मद्रास नाम के पीछे क्या रहस्य है? क्या इसका सम्बन्ध मुस्लिम स्कूल मदरसा से है? क्या मुस्लिम नेता मदरासन के नाम पर इसे मद्रास कहते हैं? या प्रभावशाली पुर्तगाली परिवार मदेरा के कारण इसका नाम मद्रास पड़ा? निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता।

दिल्ली या बारणसी या मदुरै या काँचीपुरम् की अपेक्षा चेन्नै नबीन नगर हो सकता है, फिर भी, यह स्थान स्मरणीय पुराकाल से सम्बन्ध रखता है। लगभग दो हजार वर्ष पूर्व तिरुवल्लुवर नाम के तमिल महा कवि यहाँ के मायलापुर नामक स्थान में रहते थे। उन्होंने 'तिरुक्कुरल' नामक ज्ञान और अन्तर्वेद की पुस्तक की रचना की, जिसका यदाकदा भारत के पाँचवे वेद के रूप में उल्लेख किया जाता है।

तिरुवल्लुवर एक सन्त कवि थे, एक बार उनकी धर्मपत्नी वासुकी कुएं से पानी निकाल रही थी तो उसके पति ने उन्हें आवाज दी। वह रस्सी और बाल्टी वैसे ही छोड़ कर तिरुवल्लुवर के पास दौड़ी आ गईं। एक यात्री जब कुएं पर पहुँचा तो कुएं के बीचोंबीच पानी के साथ आधारहीन लटकती बाल्टी देख कर वह हैरान रह गया।

ईसा मसीह के एक सीधे (डायरेक्ट) शिष्य सेंट थॉमस, जो पहली शताब्दी में भारत आये थे, अन्त में चेन्नै पहुँचे, जहाँ नगर के सीमान्त पर स्थित एक पहाड़ी पर उनका प्राणान्त हो गया। पहाड़ी को सेंट थॉमस पर्वत के नाम से जाना जाता है। उससे सम्बन्धित दूसरा स्मारक सेन तोम कैथडरल है, जहाँ उसे पहली बार समाधिस्थ किया गया था।

सतरहवीं शताब्दी में चेन्नै ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के लिए व्यापार का केन्द्र बन गया। प्रारम्भ में अंग्रेज समुद्र किनारे फूस की झोंपड़ियों में रहते थे। शीघ्र ही प्रसिद्ध स्मारक सेंट जॉर्ज क़िला बन कर तैयार हो गया।

नगर मायलापुर स्थित कपालेश्वर मन्दिर तथा ट्रिपलिकेन स्थित पार्थसारथि मन्दिर जैसे पवित्र स्थलों के लिए प्रसिद्ध है।

नगर का अभिन्न अंग अडयार अन्तराष्ट्रीय थियासोफिकल सो सायटी का मुख्यालय है, जो अध्ययन-चिन्तन के लिए आदर्श स्थान है।

लगभग ४० लाख की आबादी वाले, समुद्र किनारे बसे, चेन्नै नगर के आस-पास कई दर्शनीय स्थल हैं। नये स्थानों में, चोलामंडल कलाकारों का गाँव के नाम से प्रतिभावान कलाकारों की एक कालोनी है, जहाँ उनकी कला-कृतियों की प्रदर्शनी लगी है। कुछ ही दूरी पर समुद्र किनारे महाबलिपुरम् या मामलापुरम है जो मूर्तिकला और अखंडित प्रस्तर-समरकों के लिए प्रसिद्ध है।

चेन्नै में अधिकाधिक लोग तमिल भाषा बोलते है। यह भाषा अति प्राचीन व समृध्द है। इस भाषा में कितने की महानुभावों ने महत्वपूर्ण ग्रंथ लिखे।

यधपि यहाँ तमिल भाषा-भाषी ही अधिक मात्रा में हैं पर अन्य भाषा-भाषी भी यहाँ प्रचुर मात्रा में हैं। यह कहने में कोई अतिशयोम्ति नहीं कि भारत भर में बोली जानेवाली सभी भाषाओं के लोग यहाँ निवास करते हैं। वे एक-दूसरे सेआदर-भाव से बरतते हैं और सभी को यह कहते हुए गर्व होता है कि हम भारतीय हैं।

शताब्दी का अन्तिम उपनिवेश

किस उपनिवेश ने बिना क्रान्ति के स्वाधीनता हासिल की, चाहे वह हिंसक क्रांति हो या शांतिपूर्ण? किस स्थान ने यहाँ तक कि विद्रोह के बिना अपने साम्राज्यवादी शासकों को खदेड़ दिया?

उत्तर है-मकाउ। यह कभी चीन-शासित द्वीप था। किन्तु, पिछले ४४२ वर्षों से यह पुर्तगाल के अधीन था। एशिया के उस भाग और यूरोप के बीच यह व्यापार का एक समृद्ध केन्द्र था। चीन को इससे सबसे अधिक लाभ था। अनगिनत चीनी माल मकाउ के माध्यम से यूरोप जाता था।

भारत का गोवा भी पुर्तगाली उपनिवेश था। इसे स्वाधीन कराने में भारत को शक्ति का प्रयोग करना पड़ा। लेकिन इस बीच समय में कितना बदलाव आ गया है। पुर्तगाल अपना उपनिवेश चीन को लगभग वापस दे रहा है। चीन को वापस लेने की जल्दी नहीं है।

चार लाख छत्तीस हजार की आबादी का द्वीप मकाउ बीसवीं शदाब्दी में स्वतंत्र घोषित किया जाने वाला अन्तिम उपनिवेश है-एक शताब्दी, जिसने पूरे संसार के उपनिवेशों का क्रमिक विध्वंस देखा है। दिसम्बर १९ की आधी रात को यही हुआ: "मकाउ सुरक्षा बल के चार अफसरों ने ध्वज को तह लगाया और पुर्तगाली गवर्नर मि. वास्को रोचा बियेरा को सुपुर्द कर दिया। मि. वियेरा ने ध्वज को अपनी छाती से चिपका लिया और सरकारी महल पर आखिरी नज़र डाली, जो अप्रैल १९९१ से उनका कार्यालय रहा था। एक प्रवक्ता के अनुसार गवर्नर ध्वज को लिब्सन ले जायेंगे, जहाँ उसे मकाउ सांस्कृतिक अनुसंधान संस्थान में प्रदर्शित किया जायेगा।

शताब्दी की भेंट [?]

जैसे-जैसे समय गुजरता है, वैसे-वैसे बड़े आश्चर्य सामान्य वस्तुओं में सिमट कर रह जाते हैं। सन् १९१४ में जब पनामा नहर खुली थी, तब इसका इतिहास की महानतम उपलब्धियों में से एक के रूप में स्वागत किया गया था। पनामा देश से होकर बहने वाली ५० मील लम्बी इस नहर ने प्रशान्त महासागर और अटलांटिक महासागर को जोड़ दिया। नहर की खुदाई की प्रक्रिया में लगभग छः हजार मजदूर मारे गये। इसके बनने से न्यूयार्क और सॉन फ्रांकिसको के बीच की समुद्री यात्रा की दूरी ३००० मील कम हो गई।

पनामा नहर संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट की दिमागी उपज थी। उन्होंने स्वयं जलपोत में नहर से होकर यात्रा की। इसके पूर्व अमरीका के किसे राष्ट्रपति ने पद पर रहते हुए अपना देश नहीं छोड़ा।

आज परिस्थितियाँ भिन्न हैं। नहर की व्यवस्था अमरीकी लोगों के हाथ में थी। वास्तव में, यह अमरीका की सम्पत्ति थी। नहर के तटों पर अमरीका के छोटे-छोटे उपनिवेश बस गये। अमरीका की सेना तटीय जंगल के एक हिस्से में निशानेबाजी का अभ्यास और गोला-बारूद का परीक्षण करती, जिससे अनजाने में जंगल में लकड़ी चुनने वाले मूल निवासियों की जानें चली जाती थीं। पनामा निवासियों ने इसका विरोध किया।

नहर ने अपना महत्व खो दिया है। आज मालों का यातायात प्रायः मालवाहक वायुयानों या रोड़वेज़ द्वारा किया जाता है। बहुत से आधुनिक पोत बड़े आकार के कारण नहर से गुजर नहीं सकते। पनामावासी मांग कर रहे हैं कि नहर पर उनका अधिकार होना चाहिए। सन् १९७७ में, अमरीका के तत्कालीन राष्ट्रपति जिम्मी कॉटर ने एक सन्धि पर हस्ताक्षर किये, जिसके द्वारा नहर पर अमरीकी अधिकार पनामा को सौंप दिया गया। सन् १९९९ की ३१ दिसम्बर को एक औपचारिक समारोह में हस्तान्तरण सम्पन्न हो गया।

चित्र
कैप्शन प्रतियोगिता

क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो, जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो? तुम एक सामान्य पोस्टकार्ड पर इसे लिख कर इस पते पर भेज सकते हो:

चित्र परिचय
प्रतियोगिता
चन्दामामा
वडपलनि
चेन्नै - ६०० ०२६

जो हमारे पास इस माह की २५ तारीख तक पहुंच जाए। सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर १००/- रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा।

पिछले अंक के पुरस्कार विजेता हैं
श्री ओम उपाधहभाभ
९इ/२५ नार्थ टी.टी. नगर,
जवाहर चौक, भोपाल-४६२००३

विजयी प्रविष्टि
'बहना हमारी-तितली-सी प्यारी'

nutrine